ENVIRONMENTAL STUDIES

B.A. HINDI

II SEMESTER

COMPLEMENTARY COURSE

(2011 Admission)

UNIVERSITY OF CALICUT

SCHOOL OF DISTANCE EDUCATION
CALICUT UNIVERSITY P.O., MALAPPURAM, KERALA, INDIA-673 635

398

UNIVERSITY OF CALICUT

SCHOOL OF DISTANCE EDUCATION

STUDY MATERIAL

B.A. HINDI

II SEMESTER
COMPLEMENTARY COURSE

ENVIRONMENTAL STUDIES

Prepared by :

Dr. T. A. ANAND
Asst. Professor of Hindi
Govt. Arts & Science College,
Kozhikode

Lay out :
Computer Section, SDE.

©
Reserved

Module – 1

Unit 1-पर्यावरण से पनपती संस्कृति

Unit 2-पर्यावरण के प्रति सजग हमारे पूर्वज

Unit 3-पर्यावरण और जैव विविधता

Unit 4-short answers questions weightage 2

Unit 5-Essay questions weightage 4

Module – 2

Unit 6 -बदलती जलवायु, बीमार होता पर्यावरण

Unit 7-बढ़ता शहरीकरण और डूबता पर्यावरण

Unit 8-short answers questions weightage 2

Unit 9-Essay questions weightage 4

Module – 3

Unit 10- जल, जीवन और पर्यावरण

Unit 11- सही पर्यावरण से बिछड़ते जीव

Unit 12- रेगिस्तानः पर्यावरण का परिवर्तित स्वरूप

Unit 13-short answers questions weightage 2

Unit 14-Essay questions weightage 4

Module – 4

Unit 15-पर्यावरण संरक्षण के लिए सामाजिक वानिकी

Unit 16-जैवप्रौद्योगिकी और पर्यावरण

Unit 17-पर्यावरण संरक्षण के लिए नवीन प्रौद्योगिकियाँ

Unit 18-short answers questions weightage 2

Unit 19-Essay questions weightage 4

Refrence book - बदलता पर्यावरण —by Kuldeep Sharma & Vineeta Singhal,

Lokpriya publication, Delhi-110051

Unit – 1
पर्यावरण से पनपती संस्कृति :

पर्यावरण से मतलब प्रकृति के हर तत्वों जैसे- मृदा, जल, वायु मंडल, वनस्पति और जीव जंतुओं का आंतरिक संबंध है। मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। सामाजिक प्राणी बनने से पहले वह इस पर्यावरण में अकेला गूम रहा था। प्रकृति के बीच आंखें खोलने वाले मानव की पहली दोस्ती हरियाली से हुई। वृक्ष उसके दोस्त बने। इन्ही पेड़ों से कंदमूल प्राप्त कर अपना पेट भरा,उन्हीं के पत्तों को लपेटकर अपना तन ढका, इन्हीं के भीमकाय तने काट अपने पहले हथियार बनाए, लड़ाईयाँ लड़ीं। मानव ने पहली बार पत्थर पर पत्थर मारकर आग पैदा की तो उसकी मुलाकात हुई ऊर्जा से। ईघन की आवश्यकता के लिए वृक्ष की ही लकड़ी जली। उसने इसी पर्यावरण से अपना पेट बरा तथा पर्यावरण से उसका मन भी बरा।

इसमें कोई संदेह नहीं कि प्रारंभिक मानव को अपनी उत्तरजीविता के लिए पर्यावरण की भौतिक गुणवत्ता पर निर्भर रहना पड़ा जिससे उसमें प्रकृति के रहस्य, धर्म, मूल्य, सौंदर्य, आत्मीयता आदि कई आधारों पर परिभाषित करने का प्रयास किया। फलतः उसने पृथ्वी, आकाश, नक्षत्र, बादल, नदी , सागर, वृक्ष, पशु, पक्षी, पर्वत आदि को एक विशिष्ट संबंध के साथ देखा और अपने जीवन के लिए जरूरी माना।

जब आदि मानव जंगली जानवरों के हमलों से, प्राकृतिक आपदा से या फिर अन्य विपदाओं की चपेट में आने लगा तो जो संस्कृति उत्पन्न हुई वह थी आपसी समूह की । स्थान विशेष और आपसी समूह के लिए मानव ने स्थानीय पर्यावरण को अपने अधीन किया। यहाँ से उसमें एक समृद्ध संस्कृति का विकास प्रारंभ होता है। एक सामूहिक जीव के नाते मानव अपने और अपने सहयोगियों के जीवन को बनाए रखने केलिए पर्यावरण और अधिक निर्भर रहा। सामाजिकरण से परिवार का रूपायन हुआ। परिवार की संस्कृति यहाँ से आरंभ होता है। सामाजिकरण ने उसके दैनिक जीवन तथा आहार व्यवस्थाओं में परिवर्तन होने लगा। शिकार से खेती की ओर वह बढने लगा। सामूहिकरण से उसके मन में अधिकार की भावना उत्पन्न हुई। वह प्रकृति के साथ संघर्ष करने लगा। प्राकृतिक प्रकोपों से रक्षा मिलने केलिए मनुष्य ने अनेकों क्रियाओं का प्रयोग एवं उपयोग करने लगा। उसके मन में यह बात होगा की अमुक क्रिया के प्रयोग से अमुक प्रकोप से अपना परिवार और समाज का रक्षा कर सकेगा। पर्यावरण से ही मनुष्य अपना ज्ञान मंडल का विकास किया। उसने पर्यावरण से संरक्षण, घर, समाज, भोजन, औज़ार, औषधी, श्रृंगार सामग्री इत्यादि को जुटाया।

मनुष्य सामूहिक जीवी बनने के बाद संस्कृति और सभ्यता का रूपायन हुआ। शिकार करके भटकने वाले मनुष्य जब सामाजिक जीवी बना तो वह अपने समाज के खन पान तथा कृषि केलिए पानी की ज़रूत महसूस करते हुए उसने नदी किनारे अपना ढेरा डाल दिया। इस तरह सामाजिक संस्कृति का विकास तथा सभ्यता का रूपायण नदी किनारे से हुआ। देखा जाए तो विश्व के प्रमुख सभ्यताओं का विकास नदी से जुडा हुआ है। सिंधु घाटी की सभ्यता से लेकर सुमेरिया, बेबीलोनिया और मिस्र की प्राचीन सभ्यताएं इसकी प्रमाण हैं। जल के महत्व को मानव ने प्रारंभ से ही समझा है। उसने यह जान लिया था कि दिन रात बहता जल स्वयं में जीवन है और सभी जीवों, वनस्पतियों और स्वयं उसे जीवन देता है। उसे अनुभव हो गया था कि यह जल ही है जो मिट्टी में मिलकर वनस्पतियों को पनपता है उन्हें हरा-भरा करता है। वही पशुओं की प्यास बुझाता है। उसने यह जान लिया की जल मानव जीवन ही नहीं पर्यावरण के सभी पदार्थों और जीवो को आवश्यक है।

विकास के साथ ही नदी किनारे बसने वाली सभ्यता में जल के लिए आपाधापी हुई। उसी आधार पर युद्ध हुए। मानव के विभिन्न समुदाय बढ़ती जनसंख्या के साथ नदी किनारे से दूर होने लगे। जल जहां संघर्ष का कारण रहा वहीं भावनात्मक एकता का भी आधार बना। भावनात्मक एकता धर्म और तीर्थस्थानों के माध्यम से होती है। धरती का दो तिहाई भाग भी जल से ही घिरा हुआ है। पृथ्वी और पर्वतों की भांति जल की पूजा के लिए भी समान मनोभाव रहा है। मानव पर्यावरण का पूजा किया करता था। पर्यावरण को वह देवतुल्य मानता था। यहाँ तक कि वेदों में भी 'आपो देवता' का उल्लेख आता है। वर्षा के संदर्भ में इन्द्र, वरुण, पर्जन्य आदि देवताओं की प्राचीन काल से बड़ी मान्यता रही है। वरुण जल के देवता हैं। वेदों में जल को अन्न से भी बढ़कर माना गया है। इस तरह मानव के भौतिक और आध्यात्मिक जीवन में पर्यावरण का बहुत अधिक महत्व है। मनुष्य का जीवन, सोच, स्वास्थ्य, मनोरंजन, भावनाएँ, संस्कार, सभ्यता आदि का रूपायण उसके पर्यावरण से संबंधित है।

आदि-मानव से आधुनिक मानव तक आते आते मनुष्य ने पर्यावरण का उपयोग इस तरह से हो रहा की आज इसका दुर्पयोग हो रहा है। जनसंख्या में बढोतरी तथा पर्यावरण का अंधाधुन्ध इस्तेमाल से प्रदूषण बढ रहा है। आज हमारे चारों ओर की पर्यावरण प्रदूषित है। जल, वायु, मिट्टी सब प्रदूषित है। मानव की छेड़छाड़ से पहले यह धरती सघन वनों से सजी हुई थी। ज्यों-ज्यों मानव विकास की सीढ़ियाँ लांघता गया, बढ़ती हुई जनसंख्या, अनियोजित औद्योगिकीकरण तथा अनियंत्रित शहरीकरण से उत्पन्न परिस्थितियों ने पर्यावरण पर चोट की। प्राकृतिक संसाधनों में लगातार जहर घोल उन्हें तहस-नहस करने की कोशिश की। एक अनुमान के अनुसार 1950 तक दुनिया के आधे जंगल धराशायी हो चुके थे। भारत में ही कभी 80 प्रतिशत जंगल हुआ करते थे, मगर हमारे पास ऐसे घने वन आज आठ प्रतिशत रह गए हैं। समय आ गया है जब हमें अपने हित की एक नई संस्कृति विकसित करनी होगी। ऐसी संस्कृति जिसका आधार पर्यावरण सुधार होगा न कि पर्यावरण में जहर घोलना। पर्यावरण से ही हमारी पैदा हुई है। उसमें विकास हुआ है, उसका स्वरूप बदला है। तो अगर हम इस पर्यावरण को प्रदूशित करेंगे तो हमारी संस्कृति ही तहस-नहस होगी।

Unit – 2

पर्यावरण के प्रति सजग हमारे पूर्वजः

भारत में पर्यावरण के प्रति प्रारंभ से ही सजगता रही है। यहाँ एक लम्बे समय से प्रकृति को श्रद्धा की दृष्टि से देखा जाता रहा है। मानव ने विकास की सीढ़ियाँ चढ़ते हुए वृक्षों पर कुल्हाड़े अवश्य चलाए मगर जब उसे उसकी महत्ता समझ में आई तो उसने उन्हें धर्म के साथ जोड़ दिया। पर्यावरण की शुद्धता के महत्व को हमारे पूर्वजों ने बहुत पहले समझ लिया था। वेदों में धरती को धारणी यानी धारण करने वाली कहा गया है। 'यजुर्वेद' में इसे धरित्री कहा गया है। बहुमूल्य खनिज पदार्थों को गर्भ में धारण करने के कारण 'अर्थर्वेद' में इसे वसुधामी से संबोधित किया गया है। हमारे पूर्वजों ने इस धरती को माँ कहा है। यह माँ की तरह अपनी गोद में जहाँ एक ओर प्रकृति की अपार संपदा रखी हुई है वहीं दूसरी ओर इस धरती में प्राणियों की अपार संख्या है। इस माँ की, धरणी की रक्षा के लिए तथा संरक्षण के लिए हमारे पूर्वजों ने धर्म ग्रन्थों, वेदों और न्याय शास्त्रों में उलेख किया है। एक स्वच्छ पर्यावरण का अत्यंत प्रभावी ढ़ग से वर्णन श्रीरामचरितमानस में किया है। रामचरित मानस ही नहीं रामायण, महाभारत और अन्य ग्रंथों में भी प्रकृति का महत्व बताया गया है । वैदिक मंत्रों के माध्यम से मनुष्य को शिक्षा दी गई है कि पशु-पक्षियों को अपने से हेय न समझें और नदियों, पर्वतों, वृक्षों और प्रकृति के अन्य अंगों में दैवीय शक्ति के दर्शन करें। हमारे देश मे वृक्षों को काटना बहुत पहले से गलत समझा जाता रहा है। मनु स्मृति में वृक्ष के विभिन्न भागों को नष्ट करने वालों को उनकी उपयोगिता के आधार पर दण्डित करने का प्रावधान है। वृक्षों की तरह ही पशु-पक्षियों के अनावश्यक वध को भी अनिष्टकारी बताया गया है इससे पर्यावरण बिगड़ता है। 'याज्ञवल्क्य स्मृति' में कहा गया है कि पालतू पशु की हत्या करने वाले को उतने दिन तक यातना भुगतनी पड़ती है जितने बाल उस पशु के शरीर पर होता हैं।

प्राचीन काल में सड़क और आवासीय क्षेत्रों के आसपास कूड़े के ढेर लगाना भी वर्जित था। इसके लिए दण्ड का विधान था जिस का उल्लेख चाणक्य के 'अर्थशास्त्र' तथा 'मनु स्मृति' में स्पष्ट है। साहित्य में भी पर्यावरण संरक्षा और पर्यावरण के प्रति जागरूकता को चित्रित किया है। कालीदास ने 'अभिज्ञान शाकुंतलम' में आश्रम की प्रकृति को बहुत ही आत्मीयता के साथ प्रस्तुत किया है। भारत ही नहीं विश्व के अन्य देशों में भी ऐसी सभ्यताएँ रही हैं जिनमें वृक्ष की एक टहनी या एक पत्ती तक तोड़ना भी पाप माना जाता है। पूर्वी अफ्रीका के वानिका नामक कबीले में पेड़ काटना मातृ हत्या जैसा कुकृत्य कहा जाता है। केन्द्रीय आस्ट्रेलिया के डीरी कबीले के लोग पेड़ों को अपने पूर्वजों का रूपांतरण मानते हैं। हमारे लोकगीत, लोककथा और लोकपरंपराओं में पर्यावरण संरक्षण से संबद्धित विचार प्रस्तुत थी। हिमाचल प्रदेश के कुछ क्षेत्रों में लड़कियाँ वृक्षों को राखी बाँधकर अपना भाई बना लेती हैं और इस बात का प्रण लेती हैं कि वे अपने इस भाई की जीवन पर्यन्त रक्षा करेंगी। यही लोक संस्कार चिपको आंदोलन का पृष्ट भूमि है।

हमारे पूर्वजों की पर्यावरण के प्रति चेतना ने ही हमें जाग्रत किया है। हम जब भी भटक जाते हैं और प्रकृति का दोहन करने लगते हैं तो पर्यावरण पर चोट होती है और पर्यावरण संतुलन डगमगा जाता है। पर्यावरण के प्रति पूर्वजों की सजगता के कारण ही आज हम इस पर्यावरण का आस्वाधन कर रहे हैं।

Unit – 3

पर्यावरण और जैव विविधता:

हमारे चारों ओर की वनस्पति, पेड़-पौधे और जीव-जंतु मिलकर ही बना है हमारा जैवमंडल और हमारी प्रकृति संतुलन में रहती है। यदि इसमें जरा भी गड़बड़ी हो जाए, तो प्रकृति में असंतुलन पैदा हो जाएगा और इसका प्रभाव पृथ्वी पर रहने वाले सभी जीव-जंतुओं पर पड़ेगा।

आज सारे संसार का ध्यान जैवविविधता की ओर है। कहा जाता है कि पृथ्वी पर जीव-जंतुओं की 15 लाख प्रजातियाँ निवास करती हैं, लेकिन लाखों ऐसी भी प्रजातियाँ हैं जिनके बारे में हमें मालूम नहीं है। इन प्रजातियों में भी विविधता है। हमारे चारों ओर कई प्रकार की पारिस्थितिक प्रणालियाँ तथा प्राकृतिक छटाएं हैं। जैव विविधता हमारे चारों ओर है, जीन से लेकर जैवमंडल तक।

आज मानव के अतीव क्रुर हस्तक्षेप ने पर्यावरण में से इस जीव विविधता का संतुलन बिगड गया है। जैव विविधता असंतुलित और असमान होने के कारण पृथ्वी और हमारे पर्यावरण विनाश की ओर जा रहे हैं। पर्यावरण का विनाश याने मानव जीवन की दुविधा।

हर देश के पास तीन प्रकार की संपदा होती है- भौतिक, सांस्कृतिक तथा जैविक। जंतु तथा पौधे किसी भी देश की धरोहर होते हैं। वे किसी विशिष्ट स्थान पर हुए लाखों वर्ष के विकास के परिणामस्वरूप बनते हैं। वे भी हमारी भाषा या संस्कृति के समान ही मूल्यवान है।

वैज्ञानिकों का कहना है कि जैव विविधता का विलुप्तीकरण बड़ी तेज गति से हो रहा है। जैव विलुप्तीकरण का प्राकृतिक और मानवजनित कारण है। वैज्ञानिकों के अनुसार 50 करोड़ वर्षों के इतिहास में प्राकृतिक कारणों से प्रजातियों के विलुप्तीकरण की पांच बड़ी घटनाएं हो चुकी है। इसके अतिरिक्त मानवजनित कारण भी हैं जो जीव विलुप्तीकरण का कारण बन गया है। जीवों के प्राकृतिक आवासों का विनाश, बढ़ता प्रदूषण, प्राकृतिक संसाधनों का अत्यधिक दोहन, नवीन उन्नत जातियों की उत्पत्ति आदि जीव विलुप्तीकरण है। जैव विलुप्तीकरण के कारण कुछ जीवों को दुर्लभ जाति घोषित की है। संसार की जैव विविधता के संरक्षण के लिए दिसम्बर, 1993 में जैव विविधता कन्वेंशन लागू हुआ। इसमें हर देश की जैवविविधता पर सार्वभौम अधिकार को मान्यता दी गई है। कन्वेंशन पर भारत द्वारा हस्ताक्षर करने के बाद पर्यावरण तथा वन मंत्रालय ने जैव विविधता पर एक राष्ट्रीय कार्य नीति बनाई, जिसका इस समय पूरी तरह संचालन किया जा रहा है। भारत में बाघ, शेर, गैंडा आदि महत्वपूर्ण जीवों के संरक्षण के प्रयत्न किये जा रहे हैं। सूक्ष्म जीवों, पौधों और पशुओं के संरक्षण के लिए भारत में सरकार ने आठ जैवमंडल संरक्षित क्षेत्र घोषित किए हैं। ये यूनेस्को के मैन एंड बायोस्फ्रीयर कार्यक्रम पर आधारित है। पर्यावरण को संतुलित रखने तथा बनाए रखने के लिए जैवविविधता को बनाए रखा जरूरी है।

Unit – 4

निम्नलिखित प्रश्नो का उत्तर लिखिए –Weightage 2

प्र) पर्यावरण में वनों का क्या महत्व है?

उ) पेड़-पौघों से हरा-भरा वन पर्यावरण का एक अविभाज्य हिस्सा है। पर्यावरण को शुद्ध रखने के लिए वनों की हरियाली एक ऐसी आधारशिला है जिसके बिना सुरक्षा की कल्पना ही नहीं है। वनों का विस्तार तथा उनका संरक्षण वायुमंडल से दूषित गैसों की बढ़ती मात्रा को नियंत्रित भी रखता है। वनों की उपयोगिता अन्न तक ही सीमित न रहकर जीवन की आवश्यकताओं से जा जुड़ी है। सच तो यह है कि वृक्ष ही जीवन का आधार बन गए हैं। यही हमारा पर्यावरण है अगर हम वृक्षों को काटते हैं तो अपने पर्यावरण को तार-तार करते हैं।

प्र) पर्यावरण प्रदूषण को रोकने केलिए प्राचीन काल में क्या-क्या नियम बनाया गया था।

उ) प्राचीन काल में सड़क और आवासीय क्षेत्रों के आसपास कूड़े के ढेर लगाना भी वर्जित था। चाणक्य के अर्थशास्त्र में स्पष्ट लिखा है 'सड़क पर मिट्टी या कूड़ा कर्कट डालने वाले व्यक्ति को दण्ड स्वरूप 1/8 पण देना होगा। इसके अलावा जो व्यक्ति गारा कीचड़ या पानी से सड़क पर बाधा डाले उसे 1/4 पण दण्ड दिया जाए और जो राजमार्ग पर यह अपराध करे उसे दुगुना दण्ड देना होगा। राजमार्ग, पुण्य स्थान, कुएं, तालाब, देवालय, खजाना आदि स्थानों में जो मल का त्याग करे उसे उत्तरोत्तर एक पण अधिक दण्ड देना होगा। इन्हीं स्थानों पर मूत्र त्यागने वाले पर आधा पण का दण्ड होगा।'जल प्रदूषण को रोकने के लिए मनु स्मृति में स्पष्ट लिखा है कि 'पानी में मूत्र, मैला, थूक, अपवित्र यानी जूठन, रक्त, विष न छोड़े'इसके बाद विभिन्न कालों में भी पर्यावरण के प्रति सजगता नजर आई। सिंधु घाटी की सभ्यता में भी पर्यावरण के प्रति सजगता का उल्लेख मिलते हैं।

प्र) सभ्यता का रूपायन जल से हुआ। इस पर चर्चा कीजिए।

उ) मानव सभ्यता के विकास की कहानी नदियों से जुड़ी हुई है। सिंधु घाटी की सभ्यता से लेकर सुमेरिया, बेबीलोनिया और मिस्र की प्राचीन सभ्यताएं इसकी प्रमाण हैं। आदि मानव जब खेती करने लगा और समाज में बसने लगा ते उसके लिए जल की आवश्यकता बढने लगा। अपनी आवश्यकता की पूर्ती के लिए मनुष्य नदी के किनारे बसने लगा। एक ही जगह बसने से वह अपनी आवश्यकताओं की पूर्ती वहीं करने लगा। रहने केलिए मकान, व्यवसाय केलिए दूकान, कृषि, समाज का रूपायण, सामाजिक संरचना का विकास, समाज में एक मुखिया होता था उसके लिए एक अगल मकान, अन्य लोगों केलिए घक, पाठशाला, पालतू पशुओं केलिए रहने की जगह, तालाब, मनोरंजन के लिए जगह आदि। यह मानव की अथाह जल आवश्कता के कारण ही नदी के पास विकास की संस्कृति थी। विकास की इस संस्कृति ने सभ्यता का रूपायान किया।

प्र) जल से किस तरह संस्कृति पनपी?

उ) मानव सभ्यता के विकास की कहानी नदियों से जुड़ी हुई है। विश्व के सभी सभ्यतओं का वासस्थान नदी तट है। सिंधु घाटी की सभ्यता से लेकर सुमेरिया, बेबीलोनिया और मिस्र की प्राचीन सभ्यताएं इसकी प्रमाण हैं। बाद में यही नदियाँ उसकी पूजनीय भी बनी। जल के महत्व को मानव ने प्रारंभ से ही समझा है। उसने

यह जान लिया था कि दिन रात बहता जल स्वयं में जीवन है और सभी जीवों, वनस्पतियों और स्वयं उसे जीवन देता है। इसी लिए नदी तट पर देवताओं का वास माना जाताथा। इसी संकल्पना ने हमारे अनुष्ठानें में जल, नदी की महत्व को बढाया। व्यक्ति का जन्म और मृत्यू का संबन्ध जल से है। हमारे ग्रंथों में तो सृष्टि के रचयिता ब्रह्मा को 'अपव' भी कहा गया है जिसका अर्थ है 'जल क्रीड़ा'। इसी प्रकार नारायण भी नीर से जुड़ा हुआ है। वेदों में जल को अन्न से भी बढ़कर माना गया है।नदियों के तट पर बसे तीर्थ केन्द्र सदा से अध्यात्म और संस्कृति के केन्द्र और भौगोलिक चेतना के केन्द्र रहे हैं। जल की वाहक नदियों को यहाँ पूजनीय माना गया है। इस तरह जल जीवन स्रोत होने के कारण मानव संस्कृति का उदय भी इन्हीं जल स्रोतें से हुआ।

प्र) जल प्रदूषाण का कारण बताइए?

उ) हमारे सभ्यताओं का विकास नदी तट पर हुई। सभ्यता के विकास के साथ-साथ मानव समाज का भी विकास होने लगा। गाँव से शहर बनता गया। ज्यों-ज्यों मानव का परिवार बढ़ा जल की जरूरत बढी। दुखद पहलू यह रहा की हमने शुद्ध जल में अपनी गंदगी बहाई कभी धर्म के नाम पर तो कभी अपनी सफाई के नाम पर तो कभी अपनी प्रगति के नाम पर। यहीं से जल प्रदूषण की संस्कृति पनपी।

प्र) वर्तमान संदर्भ में पर्यावरण की स्थिति कैसी है?

उ)पर्यावरण जिसे मानव सभ्यता और संस्कृति का जनक माना जाता है, जिसकी पूजा की जाती है आज इसकी स्थिति शोचनीय है। आज हमने अपने चारों ओर के पर्यावरण को गंदा बना दिया है। जिस हरियाली के बीच हमने आंख खोली थी उसी को हमने तार-तार कर डाला है। यह सत्य है कि पूरे ब्रह्माण्ड में इस धरती के अतिरिक्त कहीं भी हरियाली नहीं है और हम हैं कि अनोखी और एकमात्र बेशकीमती इस धरोहर को उजाड़ने में लगे हुए हैं। ज्यों-ज्यों मानव विकास की सीढ़ियाँ लांघता गया बढ़ती हुई जनसंख्या, अनियोजित औद्योगिकीकरण तथा अनियंत्रित शहरीकरण से उत्पन्न परिस्थितियों ने पर्यावरण पर चोट की। प्राकृतिक संसाधनों में लगातार जहर घोल उन्हें तहस-नहस करने की कोशिश की। मानव अपने स्वार्थ के लिए पेडों को काट रहा है। पर्वत को मिटा रहा है। वनों ने हमें शुद्ध हवा, पानी, उपजाऊ मिट्टी का वरदान दिया है बदले में हमने उन्हें क्या दिया कुल्हाड़ा, आरा और प्रदूषण।

प्र) हमारे पूर्वजों का पर्यावरण के प्रति क्या दृष्टिकोण थी?

उ) आज हम जिस नीव पर खडे हुए है वह हमारे पूर्वजों द्वारा बनायी गयी थी। इन नीव पर खडे होकर हम ने विकास के अत्युन्नती का शिखर छू ली है। लेकिन इस यात्रा में वर्तमान मनुष्य उस पर्यावरण को भूल गया जिसने हमें जीने की जगह और भोजन दिया। हमारे पूर्वजों ने हमेशा पर्यावरण को अपना जीवन का एक अभिन्न अंग बनाया हुआ था। वे पर्यावरण को भक्ति और श्रद्धा के साथ देखते थे। पर्यावरण का उपयोग अपनी आवश्यकतानुसार करते थे ना की आधुनिक मानव की भाँति स्वार्थ के अनुसार। इसका उदाहरण है वृक्षों के काटते वक्त उससे क्षमायाचना करना या अपनी ज़रूरत बताना। हमारे पूर्वजों ने मृदा, जल, वायुमंडल, वनस्पति और जीव-जंतुओं के सामूहिक संबंधों के नाजुक संतुलन को बनाये रखने केलिए पर्यावरण को धर्म, संस्कार और कर्मकांडो का भाग बनाया। पर्यावरण के तत्वों को ईश्वर के रूप में पूजा करना। वह जो भी इस पर्यावरण से लेते थे उसका भरपाय किसी न किसी तरीके से करते थे। हमारे पूर्वजों का विचार था मानव जीवन के लिए पर्यावरण में सब कुछ है। लेकिन मानव के स्वार्थ के लिए पर्यावरण में कुछ भी नहीं है।

प्र) कालीदास कृत 'अभिज्ञान शाकुंतलम' में शकुंतला की विदायी पर प्रकृति का वर्णण किस प्रकार किया है।

उ) कालीदास ने 'अभिज्ञान शाकुंतलम' में प्रकृति को बहुत ही आत्मीयता के साथ प्रस्तुत किया है। शकुंतला की विदाई के अवसर पर वृक्ष उसे मांगलिक वस्त्र प्रदान करते हैं। इस मौके पर सखि कहती है 'अरी शकुंतला, पिता कश्यप को आश्रम वृक्ष और लता पुष्प तुझसे भी अधिक प्रिय है' तो शकुंतला भी उत्तर देती है 'मेरा भी तो इन वृक्षों पर सगे भाई जैसा स्नेह है'। शकुंतला को विदा देते हुए मर्हिष कण्व उन्हीं को संबोधित कर कहते हैं ' जो तुम्हें जल पिलाए बिना कभी पानी न पीती थी, जो मंडनप्रिय होने पर तुम्हारी कोमल पत्तियों को स्नेह के कारण नहीं तोड़ती थी और जो नए पुष्पोद्गम पर फूली न समाती थी, वही शकुंतला पतिग्रह जा रही है उसे अनुमति दो –'अधैव कुसुम प्रसूति समये यस्या भवात्युत्सवः। क्षेयं यति शकुंतला पति गृह सर्वेरनुज्ञायताम्।'

प्र) चिपको आंदोलन पर टिप्पणी कीजिए।

उ) विश्व के इतिहास में वृक्षों के संरक्षण का एक अनोका आन्दोलन है चिपको आंदोलन। पहाड़ी क्षेत्रों में विशेषकर गढ़वाल क्षेत्र में तो चिपको आन्दोलन जैसी घटनाएँ विशेष रूप से पेड़ को काटने से बचाने का प्रमाण है। इस दिशा में एक उल्लेखनीय घटना है। 12 जुलाई 1970 को जब उत्तरांचल के रानीगाँव में ग्लेशियर टूटा तब अलकनंदा में जो बाढ़ आई तो वह कई गाँवों को बहा ले गई। रानी गाँवों के निवासियों को वह दर्दनाक नजारा भुलाए नहीं भूलता। इसलिए जब 27 मार्च 1971 को एक महिला, जो गाय चरा रही थी ने एक व्यक्ति को हाथ में कुल्हाड़ी लिए आते देखा तो वह बरबस चीख पड़ी उसकी दर्दनाक चीख से वह पहाड़ी क्षेत्र गूंज गया। आसपास काम करने वाली महिलाएँ एकत्रित हो गई और माजरा समझ पेड़ों से चिपक गई। सभी ने मिलकर उस व्यक्ति को वृक्ष काटने से रोका। इस प्रकार रानी गांव में चिपको आंदोलन पनपा और वह इस आंदोलन का केन्द्र बन गया। गौरा देवी, गंगा देवी, हिमा देवी आदि अनेक महिलाएँ वृक्षों को अपने प्राण देकर भी बचाने के लिए निरंतर चौकसी के काम में जुट गई। महिलाओं द्वार वृक्ष बचाने के लिए की गई यह अनोखी घटना चिंगारी की तरह गोवेरवर, केदारघाटी, रामपुरफाटा और अन्य कई स्थानों पर फैल गई। उन्होंने इस उद्देश्य को हर व्यक्ति तक पहुंचाने का प्रयास किया कि वह एक स्वर में कहे कि 'वन रक्षकों आओ वन की रक्षा करो। वृक्षों के दुश्मन वृक्षों को छोड़ दो उसकी एक शाखा भी मत तोड़ो। इसने मुझे छांव दी है, सुरक्षा दी है और अब मैं इसे बचाऊ। वृक्ष कटे तो मिट्टी चुक जाएगी, नदियाँ उसे बहा ले जाएंगी, फसल नहीं होगी और तब अकाल छा जाएगा।' पहाड़ी क्षेत्रों में चिपको आंदोलन को लेकर एक लम्बे समय तक इस बात का प्रयास किया गया कि हर हालत में वृक्षों को काटने से बचाया जाए। इसी प्रकार इस क्षेत्र में सुंदरलाल बहुगुणा, चण्डीभट्ट जैसे लोगों ने भी चिपको आन्दोलन को आगे बढ़ाया। यह एक ऐसी शुरूआत है जिसमें भारत के लोगों के अंदर वृक्षों के संरक्षण के प्रति जागरूकता पैदा की है।

प्र) संकटग्रस्त प्रजातियाँ कौन-कौन सी है?

उ)इस वर्ग के अन्तर्गत आने वाले जीवों की प्रजातियाँ अभी पूरी तरह तो पृथ्वी से विलुप्त नहीं हुयी है लेकिन इनकी संख्या जिस तेजी से कम होती जा रही है। जैसे अफ्रीकन हाथी, भारतीय चीता, गिद्ध, काला हिरण, कस्तूरी मृग, बारहसिंगा, भारतीय गायों की किस्मों, अनेक प्रकार की फसलों जैसे देशी चावल की किस्में, गेहूँ, बाजरा,देसी कपास आदि।

प्र) दुर्लभ जातियाँ कौन-कौन सी है?

उ) ऐसी जीव प्रजातियाँ जो एक विशेष प्रकार की जलवायु एवं आवास में ही रहने में सक्षम हैं, वे तेजी से विलुप्त हो रही हैं। जैसे कि पाकिस्तान और उत्तरी भारत में उगाए जाने वाले बासमती चावल; कर्नाटक, शिमला और कश्मीर में पाए जाने वाले चंदन, पड़ाक और देवदार के वृक्ष। अंडमान में पाए जाने वाली मनुष्यों की चार प्रमुख जातियाँ ओंगी, सौम्पेन, सेन्टिनल, जराबा भी दुर्लभ जातियों की श्रेणी में रखी गयी हैं।

प्र) पारिस्थितिकी से आप क्या समझते हैं?

उ) पारिस्थितिकी प्रमुख रूप से जीवधारियों के जन्म, विकास, वितरण, प्रवृत्ति व उनके प्रतिकूल अवस्थाओं में भी जीवित रहने से संबंधित है। अंग्रेजी में पारिस्थितिकी का अंग्रेजी में इकोलोजी कहते हैं। इकोलोजी शब्द ग्रीक भाषा के दो शब्दों 'ओइकोस' और 'लोजी' से मिलकर बना है। ओइकोस का शब्दिक अर्थ 'घर' तथा 'लोजी' का अर्थ विज्ञान या अध्ययन से है। शाब्दिक अर्थानुसार इकोलोजी- पृथ्वी पर पौधों, मनुष्यों, जंतुओं व सूक्ष्म जीवाणुओं के 'घर –के रूप में अध्ययन है। जर्मन प्राणीशास्त्री अर्नस्ट हैक्कल जिन्होंने सर्वप्रथम सन् 1869 में ओइकोलोजी शब्द का प्रयोग किया, पारिस्थितिकी के ज्ञाता के रूप में जाने जाते हैं। जीवधारियों (जैविक) व अजैविक (भौतिक पर्यावरण) घटकों के पारस्परिक संपर्क के अध्ययन को ही पारिस्थितिकी विज्ञान कहते हैं।

प्र) पारितंत्र (ecological system) के प्रकार को स्पष्ट कीजिए?

उ) किसी विशेष क्षेत्र में किसी विशेष समूह के जीवधारियों का भूमि, जल अथवा वायु से ऐसा अन्तर्संबंध जिसमें ऊर्जा प्रवाह व पोषण श्रृंखलाएं स्पष्ट रूप से समायोजित हों, उसे पारितंत्र (ecological system) कहा जाता है। पारितंत्र मुख्यतः दो प्रकार के हैंः स्थलीय (Terrestrial) पारितंत्र व जलीय (Aqiatic) पारितंत्र। स्थलीय पारितंत्र को पुनः 'बायोम' (Biomes) में विभक्त किया जा सकता है। बायोम, पौधों व प्राणियों का एक समुदाय है, जो एक बड़े भौगोलिक क्षेत्र में पाया जाता है। पृथ्वी पर विभिन्न बायोम की सीमा का निर्धारण जलवायु व अपक्षय संबंधी तत्त्व करते है। अतः विशेष परिस्थितियों में जंतुओं के अन्तर्संबंधों के कुल योग को 'बायोम' कहते हैं। इसमें वर्षा, तापमान, आर्द्रता व मिट्टी संबंधी अवयव भी शामिल हैं। संसार के कुछ प्रमुख पारितंत्र : वन, घास क्षेत्र, मरुस्थल और टुण्ड्रा (Tundra) पारितंत्र हैं। जलीय पारितंत्र को समुद्री पारितंत्र व ताजे जल के पारितंत्र में बाँटा जाता है। समुद्री पारितंत्र में महासागरीय, तटीय ज्वारनदमुख, प्रवाल भित्ति (Coral reef), पारितंत्र सम्मिलित हैं। ताजे जल के पारितंत्र में झीलें, तालाब, सरिताएँ, कच्छ व दलदल (Marshes and bogs) शामिल हैं।

Unit - 5

निम्नलिखित प्रश्नों का उत्तर लिखिए :weightage 4

प्र) पर्यावरण और संस्कृति का संबन्ध स्पष्ट कीजिए?

उ) पर्यावरण और संस्कृति का अटूट संबन्ध है। यह बात साफ है कि कोई भी संस्कृति बिना पर्यावरण को साधन बनाए पनपी ही नहीं। सृष्टि की शुरुआत की बात कीजिए तो अक्षत अनछुई प्रकृति के बीच आंखें खोलने वाले मानव की पहली दोस्ती हरियाली से हुई। मानव जाती का सहारा है पर्यावरण। पर्यावरण उसका आवास व्यवस्था है। उसकी हर एक आवश्यकताओं की पूर्ति पर्यावरण से होता है। पर्यावरण से तात्पर्य है किसी भी प्रदेश या स्थान की जीव, पेड़-पौधे, पानी, नदी, पर्वत और वहाँ की जलवायू से है। संस्कृति से तात्पर्य है किसी भी मानव राशी की रहन-सहन, आचार-व्यवहार, विश्वास, कला, उत्सव, क्रिया-कर्म आदि से है। संस्कृति मानव मस्तिष्क की अंतर्निहित संरचना है जो उसके भौतिक और सामाजिक जीवन को ही नहीं इतिहास को भी प्रभावित करती है। तो यह देखा गाया है की मानव संस्कृति का रूपायण पर्यावरण से हुआ है। पृथ्वी को सात भूखण्डों में विभाजित किया गया है। यहाँ मनुष्य की कई जन-जाती, नसल और वर्ग है। इन भूखण्डों में प्राप्त मानव राशियों की संस्कृति में भिन्नता देखा जा सकता है। इसका मूल कारण है पर्यावरण। मनुष्य इस पर्यावरण के साथ प्यार और संघर्ष करते हुए ही उसकी संस्कृति का रूपायन करता है। प्रारंभिक मानव को अपनी उत्तरजीविता के लिए पर्यावरण की भौतिक गुणवत्ता पर निर्भर रहना पड़ा जिससे उसमें प्रकृति के रहस्य, धर्म, मूल्य, सौंदर्य, आत्मीयता आदि कई आधारों पर परिभाषित करने का प्रयास किया। फलतः उसने पृथ्वी, आकाश, नक्षत्र, बादल, नदी, सागर, वृक्ष, पशु, पक्षी, पर्वत आदि को एक विशिष्ट संबंध के साथ देखा और अपने जीवन के लिए जरूरी माना।

जब आदि मानव जंगली जानवरों के हमलों से , प्राकृतिक आपदा से या फिर अन्य विपदाओं की चपेट में आने लगा तो जो संस्कृति उत्पन्न हुई वह थी आपसी समूह की। स्थान विशेष और आपसी समूह के लिए तो उन्होंने स्थानीय पर्यावरण की डोर थामे एक समृद्ध संस्कृति का विकास कर लिया। यह समूह एक-दूसरे की रक्षा करता था, एक-दूसरे के लिए जीता था। इसी दौरान इनकी समझ में आया कि अपना कुनबा कैसे बढ़ाना है और किस प्रक्रिया से बढ़ाना है। यहाँ पुरुष और स्त्री के बीच विवाह तथा उसके बाद बच्चों का जनम आदि होने लगा। वह समूह में रहते हुए अपना एक परिवार का निर्माण किया। जिससे परिवार की संस्कृति भी विकसित हुई। पुरुष ने समूह संस्कृति को महत्व देते हुए पुरुषों का समूह बनाया और शिकार, आपदाओं से सुरक्षा तक भोग की संस्कृति का विस्तार किया। जिस पर्यावरण से उसकी पहली मुलाकात हुई उसमें भी समय-समय पर सुधार के रास्ते पुरुष अपनाते रहे। यहाँ मनुष्य की माँग में बदलाव आने लगा। कभी स्त्री की मांग, कभी बच्चों की मांग तो कभी स्वयं अपनी मांग के आधार पर आहार में बदलाव आया। इसका मूल कारण है पर्यावरण में संतुलन को बनाये रखा। यहीं से आहार बदलाव की संस्कृति पैदा हुई जो आसपास के पर्यावरण से ही पाली-पोसी गई। विविधता की यह संस्कृति केवल जीवों तक ही सीमित न थी। कंदमूल के आहार में भी विविधता आई। संभवतः उसी दौरान उनके आहार की चाह के आधार पर मांसाहारी और शाकाहारी संस्कृति का विकास हुआ। अपनी विभिन्न आवश्यकताओं या मांग ने मनुष्य को ज्ञान वृद्धि तथा तलाश की ओर बढ़ाया। वृक्षों, फलों, फूलों, जड़ी-बूटियों आदि का उपयोग वह जान लिया।

ज्यों-ज्यों मानव ने विकास किया त्यों-त्यों उसने कुछ नया खोज खुले आकाश तले रहने वाले मानव को किसी समय अपनी एक अलग छिपी और निजी दुनिया बसाने की बात समझ में आई और तभी उसने आवास

संस्कृति का विकास किया। आवास संस्कृति ने मानव को आराम और सुरक्षा तो दी ही साथ ही इसी दौरान सामाजिक प्राणी वाली संस्कृति भी विकसित हुई।

जब गुफाओं, कंदराओं में मानव बस्तियाँ पनपने लगीं तो मानव में सौन्दर्यीकरण की संस्कृति विकसित होने लगी। हर कोई किसी न किसी रूप में अपने घरों को सुंदर बनाने लगा। शुरुआती दौर में इसके लिए पर्यावरण को ही आधार बनाया गया। घर के आसपास आकर्षक वृक्ष लगाए गए, फूलों वाली बेलें, झाड़ियों आदि से सजाया गया। बाद में मिट्टी और पशुओं के गोबर से भी लेपकर घर को आकर्षक बनाया गया। इस तरह अधिक सुरक्षित और अधिक से अधिक आकर्षक घर बनाने की होड मानव में होने लगा। यहाँ भवन निर्माण की संस्कृति आरंभ हुई।

तन ढकने के लिए भी हम पर्यावरण पर आश्रित है। पहले पत्तों को वृक्ष की पतली टहनियों को रस्सीनुमा बनाकर लपेटा गया तो बाद में मरे जीवों की खाल को बतौर वस्त्र तन ढकने केलिए प्रयोग किया जाने लगा। मानव जीवन में तन ढकने की शुरूआत एक तरह से मानव मस्तिष्क के विकसित होने की द्योतक थी। इसके अलावा बतौर सामाजिक प्राणि यह एक सभ्यता का सुधरा स्वरूप भी था।

सामाजिक संस्कृति के साथ और भी महत्वपूर्ण बातें सामने आईं जो सीधे पर्यावरण से जुड़ीं। मसलन खूंखार पशुओं से मानव में रौद्र स्वरुप की संस्कृति पनपी। शुरुआती मानव जब पशुओं के साथ लड़ता था तो कई तरह से उनके हाव-भाव सीख उसी तरह से प्रहार करने लगा। बाद में मानव -मानव के बीच आपसी लड़ाई भी ठीक पशुओं की तरह होने लगी। अगर हम अपने आयोदन कला देखें तो हमे यह ज्ञात होगा की पशु-पक्षियों के हाव-भाव और चाल-चलन के अनुसार उसे ढाला गया है।

सामाजिक संस्कृति के विकास में जहाँ रौद्र, वीभत्स जैसे रूप थे तो वहीं श्रृंगार रस की अनुभूति भी हुई। प्रकृति प्रेमी मानव जल्द ही अपने परिवार में पत्नी के सौन्दर्य को लेकर आकर्षित होने लगा तो वही सौन्दर्य नारी सुलभ आवश्यकता बन गई। मनुष्य जाति में मादा में प्राकृतिक रूप से मिले सौन्दर्य के अलावा कृत्रिम रूप से भी अपने आपको रूपवती और आकर्षक बनाने के तरीके खोजे गए। श्रृंगार सामग्री जुटाने केलिए मानव ने पर्यावरण की ही शरण ली और अपने आसपास से रूप संवारने के साधन ढुंढने लगे।

भारतीय संदर्भ में हमारे विश्वास और क्रियाओं में जल, नदी, पेड-पौधे, आकाश, नक्षत्र आदि का उपयोग और सहारा लिया जाता है। पंचभूत की संकल्पना भी संस्कृति और पर्यावरण के संबन्ध को दर्शाता है। विश्व के किसी भी संस्कृति को देखे, वहाँ के लोगों के भैतिक, मानसिक और शारीरिक ढ़ांचा का अध्ययन से यह ज्ञात होता है कि मनुष्य जिस पर्यावरण में जीता है उसका रुप, चिंता, और संस्कृति अमुक पर्यावरण के अनुरूप होती है। इस तरह यह देखा गया है कि मानव जीवन और संस्कृति में आदि काल से वर्तमान काल तक जो वस्तु रूपायित हुई है उनमें पर्यावण का अंश देखा जा सकता है। अतः हम यह कह सकते है कि संस्कृति और पर्यावरण का अटूट संबन्ध है।

प्र) पर्यावरण के प्रति हमारे पूर्वजों का नज़रिया क्या था?

उ) भारत में पर्यावरण के प्रति प्रारंभ से ही सजगता रही है। यहां एक लम्बे समय से प्रकृति को श्रद्धा की दृष्टि से देखा जाता रहा है। मानव ने विकास की सीढ़ियाँ चढ़ते हुए वृक्षों पर कुल्हाड़े अवश्य चलाए मगर जब उसे उसकी महत्ता समझ में आई तो उसने उन्हें धर्म के साथ जोड़ दिया। पर्यावरण की शुद्धता के महत्व को हमारे पूर्वजों ने बहुत पहले समझ लिया था। चूंकी वृक्ष, जल और सभी जीव-जगत के सामंजस्य से ही

पर्यावरण स्वच्छ रखा जा सकता है इसलिए जीव-जंतुओं के वध और वनस्पति के बिना औचित्य नाश पर रोक लगाई गई। स्कंद पुराण में वनस्पति को पूज्य मानते हुए लिखा है

'आर्युबलं यशो वर्चः प्रजाः पशुवसूनिच
ब्राह्म प्रज्ञा च मेघां च त्व नो देहि वनस्पति।।

अर्थात् हे वनस्पति! आप मुझे आयु, बल, यश, तेज, संतति, पशुधन, वैदिक ज्ञान, प्रज्ञा और धारण शक्ति प्रदान करो।

वनस्पति की धारक धरती को वेदों में धारणी यानी धारण करने वाली कहा गया है। यजुर्वेद में इसे धरित्री कहा गया है। बहुमूल्य खनिज पदार्थों को गर्भ में धारण करने के कारण 'अर्थवेद' में इसे वसुधामी से संबोधित किया गया है। हमारे पूर्वजों ने इस धरती को मां कहा है। कारण साफ है इसने मां की तरह अपनी गोद में जहां एक ओर प्रकृति की अपार संपदा रखी हुई है वहीं दूसरी ओर इस धरती में प्राणियों की अपार संख्या है। यह धरती धारणी बनकर हमें निवास अथवा आश्रय प्रदान करती है, वसुंधरा बनकर अनेक खनिजों को धारण करते हुए अन्नोत्पत्ति में सहायक बनती है तथा विश्वम्भरा बनकर हमारा भरण-पोषण करते हुए तथा वस्त्रादि को उपलब्ध कराते हुए तापमान को नियंत्रित करने की सातर्थ्य प्रदान करती है।

असल में हमारे पूर्वज पूरी तरह से वृक्षों पर ही निर्भर रहे। भारत में रहने वाली सभी अनार्य जातियाँ वृक्षों की उपयोगिता को स्वीकार करते हुए उन्हें सम्मान देती थीं और उनकी पूजा अर्चना करती थीं। सच तो यह है कि आर्यों ने भी वृक्ष पूजा अनार्यों से ही सीखी थी।

वेदों में प्रकृति के विभिन्न अंग बादल, सूर्य, ऊष्मा, जल व वृक्षों से जुड़े मंत्र मिलते हैं। मनुष्य को प्रकृति का अभिन्न अंग मानने वाले ऋषि-मुनियों को यह भली-भांति मालूम था कि जड़ जगत अर्थात् पृथ्वी नदियों, पर्वत आदि और चेतन अर्थात् मनुष्य, पशु-पक्षी और वन इन सभी इकाइयों के पारस्परिक समानुपातिक सामंजस्य से पर्यावरण संतुलित रहता है। वे यह जानते थे कि पर्यावरण के किसी एक अंग में व्याघात होने से उसका परिणाम सम्पूर्ण पर्यावरण प्रणाली को प्रभावित कर सकता है। इसीलिए उन्होंने सदाचार जगत के प्रति सहृदयता, दया और प्रेम की भावना पर बल दिया था अर्थात् जियो और दूसरों को जीने दो। वैदिक मंत्रों के माध्यम से मनुष्य को शिक्षा दी गई है कि पशु-पक्षियों को अपने से हेय न समझें और नदियों, पर्वतों, वृक्षों और प्रकृति के अन्य अंगों में दैवीय शक्ति के दर्शन करें।

पर्वतों के प्रति हमारे पूर्वजों की दृष्टि कितनी सम्मानपूर्ण थी, इसका सर्वोत्तम उदाहरण हमें गोस्वामी तुलसीदास के 'कुमार संभव' में प्राप्त होता है जहाँ हिमालय को देवात्मा और पृथ्वी को मानदण्ड कहकर उसकी प्रतिभा व्यक्त की गई है।

प्रकृति के प्रति समर्पण और निकटता हमारे पूर्वजों में कहीं ज्यादा थी। उनके लिए सम्पूर्ण प्रकृति उनके जीवन का अभिन्न अंग थी। इसी प्रकार प्रकृति से अपार प्रेम होने के कारण हमारे पूर्वज भी स्वच्छ जल एवं वायु से युक्त सुंदर उपवनों में निवास करते थे।

प्र) लोक साहित्य और लोक गीतों में पर्यावरण तथा वृक्ष संरक्षण का वर्णण किस प्रकार किया गया है?

उ) पर्यावरण और लोक साहित्य का पारस्परिक संबंध है। आदिकाल में भाषा के लिखित रूप से पहले मौखिक रूप से गीत, कथा आदि का प्रचार होता था। इन मौखिक गीतों एवं कथाओं का मुख्य विषय पर्यावरण हुआ करता था। इस का मुख्य कारण यह है कि तत्कालीन जनता अपने आसपास की ज़िदगी और पर्यावरण को देखते थे, उससे ज्ञान अर्जित करते थे। इस लिए हमारे लोक साहित्य में, लोक गीतों में

पर्यावरण संसक्षण, पूजा आदि का उल्लेख देखा जा सकता है। हमारे लोक परंपरओं में, उत्सवों में पर्यावरण का प्रमुख स्थान है। पुष्प जन्म पर उत्सव मनाने वाली परंपराएं देखी जा सकती है। होली, नवरात्री, ओणम, संक्रांति, पोंगल, बिहू, हरियाली तीज जैसे त्यौहार किसी न किसी रूप में अन्न,फसल, हरियाली आदि से संबद्धित हैं। ऐसे असंख्य लोकगीत और लोग विश्वास हैं जो वृक्ष, पूजा, हरियाली और पुष्पों के प्रति आत्मीयता व्यक्त करते हैं।

उत्तर प्रदेश , हिमाचल प्रदेश, मध्य प्रदेश, बिहार जैसे राज्यों में लोकगीतों में भी पेड़ की महिमा का बखान किया जाता है यहाँ तक कि बूढ़े वृक्ष को बाबा, भाई, पिता जैसे रिश्ते से भी जोड़ा जाता है। पहाड़ी क्षेत्रों में पीढ़ी-दर-पीढी पौधों की रक्षा केलिए प्रया किए जाते रहे हैं जो आज भी जारी हैं। हिमाचल प्रदेश के कुछ क्षेत्रों में लड़कियाँ वृक्षों को राखी बांधकर अपना भाई बना लेती हैं और इस बात का प्रण लेती हैं कि वे अपने इस भाई की जीवन पर्यन्त रक्षा करेंगी।

भारत ही नहीं विश्व के अन्य देशों में भी ऐसी सभ्यताएँ रही हैं जिनमें वृक्ष की एक टहनी या एक पत्ती तक तोड़ना भी पाप माना जाता है। पूर्वी आफ्रीका के वानिका नामक कबीले में पेड़ काटना मातृ हत्या जैसा कुकृत्य कहा जाता है। केन्द्रीय आस्ट्रेलिया के डीरी कबीले के लोग पेड़ों को अपने पूर्वजों का रूपांतरण मानते हैं। उन्हीं की भांति कुछ फिलीपीन्स द्वीप वासी भी उनपर अपने पूर्वजों की आत्मा का वास मानते हुए उन्हें केवल पुरोहित की आज्ञा से ही काटते हैं। कुछ ऐसी भी जातियाँ रहीं हैं जिनमें यह प्रसिद्ध है कि जब पेड़ काटा जाता है तो उसकी चीख सुनाई देती है और उसकी रक्त की धारा बहती है। जब भी वे किसी पेड़ को काटते हैं तो विवशता के लिए क्षमायाचना करते हैं। कई कबीलों में फल देने वाले वृक्षों की गर्भिणी स्त्री की तरह देखभाल भी की जाती है।

प्र) जीवों का विलुप्तीकरण का कारण व्यक्त कीजिए।

उ) पृथ्वी से जीवों के विलुप्त होने की समस्या नयी नहीं है। पहले प्रकृति द्वारा जो विनाश करोड़ों वर्षों में हुआ वह आज मानवीय क्रियाओं के कारण सैकड़ों वर्षों में हो रहा है। जीवों का विलुप्तीकरण का कारण दो है – 1) प्राकृतिक कारण, 2) मानवजनित कारण।

प्राकृतिक कारण - वैज्ञानिकों के अनुसार 50 करोड़ वर्षों के इतिहास में प्राकृतिक कारणों से प्रजातियों के विलुप्तीकरण की पांच बड़ी घटनाएँ हो चुकी हैं। एक अनुमान के अनुसार जीवों के पृथ्वी से विलुप्तीकरण की सबसे बड़ी घटना लगभग 6.4 करोड़ वर्ष पहले घटी थी। एक विशालकाय खगोलपिंड पृथ्वी से टकराया था और डायनोसोर जैसे अनेक विशाल जंतु सदा के लिए नष्ट हो गए बल्कि इस काल में पृथ्वी से लगभग एक तिहाई जीव नष्ट हो गए थे। इससे भी बहुत पहले, लगभग 25 करोड़ वर्ष पूर्व, जब डायनोसोरों का भी पृथ्वी पर आगमन नहीं हुआ था तब भी विलुप्तीकरण की एक व्यापक घटना हुयी थी। कुछ वैज्ञानिक इसका कारण खगोलय पिंडों को मानते हैं तो कुछ इसे जलवायु परिवर्तन का प्रभाव मानते हैं। समय-समय पर पृथ्वी से जीवन के विलुप्तीकरण के अनेक सिद्धांत प्रतिपादित किए गए किन्तु किसी के भी स्पष्ट प्रमाण नहीं मिले। एक मत है कि उस काल में कुछ अज्ञात कारणों से बड़े पैमाने पर कोयले का ऑक्सीकरण हुआ जिसके कारण वायुमंडल में ऑक्सीजन की मात्रा बहुत कम हो गयी जबकि कार्बन डाइऑक्साइड की मात्रा बहुत बढ़ गयी। यही वह समय था जब सागर तल में कमी होने के कारण भूखंड और भी बढ़ गया होगा। परिणामस्वरूप पृथ्वी पर रहने वाले जीव ऑक्सीजन की कमी के कारण दम घुटने से मर गए होंगे। कुछ वैजानिकों का मत है कि प्रत्येक 10 करोड़ वर्षों के बाद विशालकाय

खगोल पिंड पृथ्वी से टकराते हैं और बड़ी संख्या में जीवों का विलुप्तीकरण होता है। ऐसी सबसे नजदीकी घटना 1908 में साइबेरिया के तुंगस्का नामक स्थान पर घटी थी जिसमें लगभग 2 हजार वर्ग किलोमीटर क्षेत्र एकदम समतल हो गया था। यह खगोलीय पिंड पृथ्वी तक पहुंचा भी नहीं था और वायुमंडल में ही विस्फोटित हो गया था। इस घटना के प्रत्यक्षदर्शियों के अनुसार विस्फोट के बाद धुएँ के बादल 500 किलोमीटर दूर से भी देखे जा सकते थे। इसके प्रभाव से इतनी गर्मी उत्पन्न हुई कि पूरे क्षेत्र की वनस्पति जलकर राख हो गयी।

मानवजनित कारण – पिछले तीन-चाल दशकों में हुए औद्योगिक विकास और जनसंख्या विस्फोट के कारण जैव विविधता को काफी नुकसान पहुंचा है और विकास विनाश का रूप लेता जा रहा है। जीवों के नष्ट होने का सबसे बड़ा कारण हे अनके प्राकृतिक आवासों का विनाश। बढ़ती मानव जनसंख्या के कारण वनों की अंधाधुंध कटाई जीवों के प्राकृतिक आवासों को नष्ट कर रही है। फलस्वरूप तमाम तरह के जीवों, प्राकृतिक वनस्पतियों का लगातार ह्रास हो रहा है। बढ़ता प्रदूषण जैसे जंगलों में आग लगना, औद्योगिक इकाइयों से निकलने वाला धुआं और बहिस्राव, समुद्रों में जहाजों और टैंकरों से फैलने वाला तेल कुछ ऐसे कारण हैं जिनके कारण छोटी वनस्पतियों, प्राणियों और सूक्ष्मजीवों के नष्ट होने का तो खतरा बढ़ता ही है साथ ही बढ़ते प्रदूषण के कारण जैवविविधता प्रभावित हो रही है। रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग मृदा में बसने वाले उपयोगी सूक्ष्मजीवों को नष्ट कर रहा है। समुद्र एवं नदियों में शहरी कचरे का प्रवेश जलजीवों की जान का ग्राहक बना हुआ है। मानव द्वारा प्राकृतिक संसाधनों का आवश्यकता से अधिक उपयोग भी जैवविविधता नष्ट होने का बहुत बड़ा कारण है। कुछ विशेष पेड़ों की अंधाधुंध कटाई । सजावट के लिए बाघ, शेर, हाथी आदि जानवरों का शिकार ने इन नसलों को कम किया है। आधुनिक युग में बढती आबादी के कारण खाद्य पदार्थों की मांग बडी है। इस माँग की पूर्ती के लिए हरित एवं श्वेत क्रांति का आरंभ खाद्यान्न फसलों जैसे गेहूँ, चावल, मक्का आदि की अधिक उपज देने वाली प्रजातियों और ज्यादा दूध देने वाली गायों की विदेशी नस्लों के साथ हुआ था। इससे स्वदेशी गुणवत्ता की दृष्टि से श्रेष्ठ प्रजातियाँ निरंतर घटती जा रही हैं।

इस तरह प्राकृतिक और मानवजनिक कारणों से जीवों का विलुप्तीकरण हो रहा है। जीवों का विलुप्तीकरण इतना अधिक हो रहा है कि आने वाले युग में मानव जाती भी विलुप्त हो जाएगा।

प्र) पर्यावरण में जीवों का विलुप्तीकरण का मानवजनित कारण क्या-क्या है? चर्चा कीजिए।

उ) यद्यपि जीवों का विलुप्त होना एक प्राकृतिक प्रक्रिया है और प्रकृति में होने वाले अनेक प्रकार के परिवर्तनों का प्रभाव जीवों पर होता है और पृथ्वी से जीवों की विभिन्न जातियों और प्रजातियों का विलुप्तीकरण होता रहता है। इसमें प्राकृतिक परिवर्तनों के अलावा कुछ मानवजनित कारण भी ऐसे हैं जो जीव विलुप्तीकरकण का कारण बन जैव विविधता क्षरण को बढ़ावा दे रहे हैं। वर्तमान युग में हुए औद्योगिक विकास और जनसंख्या विस्फोट के कारण जैव विविधता को काफी नुकसान पहुंचा है और विकास विनाश का रूप लेता जा रहा है। जैवविविधता क्षरण के कुछ मानवजनित कारण इस प्रकार हैं:

जीवों के प्राकृतिक आवासों का विनाश – जीवों के नष्ट होने का सबसे बड़ा कारण है उनके प्राकृतिक आवासों का विनाश। बढ़ती मानव जनसंख्या के कारण वनों का अंधाधुंध कटाई जीवों के प्राकृतिक आवासों को नष्ट कर रही है। फलस्वरूप तमाम तरह के जीवों, प्राकृतिक वनस्पतियो का लगातार ह्रास हो रहा है। अनेक विकासशील देशों में वनों को काटकर खेत और चरागाहों में बदल दिया गया है। ये सब प्रक्रियाएँ इतनी तेजी से होती हैं कि जीवों को एक स्थान से दूसरे स्थान तक जाने का अवसर भी नहीं मिल पाता।

बढ़ता प्रदूषण – जंगलों में आग लगना, औद्योगिक इकाइयों से निकलने वाला धुआँ ओर बहिस्राव, समुद्रों में जहाजों और टैंकरों से फैलने वाला तेल कुछ ऐसे कारण हैं जिनके कारण छोटी वनस्पतिों, प्राणियों और सूक्ष्मजीवों के नष्ट होने का तो खतरा बढता ही है साथ ही बढ़ते प्रदूषण के कारण जैवविविधता प्रभावित हो रही है। उद्योगों, वाहनों आदि से निकलने वाली प्रदूषित गैसों और रसायनों के अलावा खेती में फसलों की सुरक्षा के लिए प्रयोग किए जाने वाले तरह-तरह के रासायनिक कीटनाशकों, उर्वरकों एवं अन्य रसायनों के जल, मृदा और वायु में मिलने के कारण पर्यावरण दिन ब दिन प्रदूषित होता जा रहा है। इन रसायनों के खाद्य श्रृंखला में प्रवेश करने के कारण अन्य जीवों पर भी इनका प्रभाव पड़ रहा है। समुद्र एवं नदियों में शहरी कचरे का प्रवेश जलजीवों की जान का ग्राहक बना हुआ है।

प्राकृतिक संसाधनों का अत्यधिक दोहन – प्राकृतिक संसाधनों का आवश्यकता से अधिक उपयोग भी जैवविविधता नष्ट होने का बहुत बड़ा कारण है। जब वृक्षों या जीवों का उपयोग उनकी उत्पति से अधिक होगा तो उनके खत्म होने की संभावना बढ़ना स्वाभाविक ही है। लोगों में फर्नीचर तथा सजावटी वस्तुएँ बनाने के लिए देवदार, सागवान, चंदन आदि बहुमूल्य वृक्षों की अंधाधुंध कटाई से इनका बहुत तेजी से कम होते जा रहे हैं। बाघ, शेर, चीते आदि की खाल और हाथी के गजदंतों से बनने वाले सजावटी सामान के कारण तथा मास के लिए शिकार के कारण ब्लू वेल आदि की जनसंख्या में तेजी से कम होता जा रहा है।

नवीन उन्नत जातियों की उत्पत्ति - बढती आबादी के कारण खाद्य पदार्थों की मांग बडी है। इस माँग की पूर्ती के लिए हरित एवं श्वेत क्रांति का आरंभ खाद्यान्न फसलों जैसे गेहूँ, चावल, मक्का आदि की अधिक उपज देने वाली प्रजातियों और ज्यादा दूध देने वाली गायों की विदेशी नस्लों के साथ हुआ था। इससे स्वदेशी गुणवत्ता की दृष्टि से श्रेष्ठ प्रजातियाँ निरंतर घटती जा रही हैं।

अतः हम कह सकते हैं कि मानवजनित इन चार कारणों से जीवों का विलुप्ती हो रहा है। अब स्थिति ऐसा है कि मानव राशी भी विलुप्त होने की संभावनाएँ है।

प्र) हमारे वैधिक ग्रन्थों और पौराणिक ग्रन्थों में पर्यावरण और पर्यावरण संरक्षण पर क्या क्या बाते कहीं गयी है?

उ) भारतीय संदर्भ में पर्यावरण को बहुत महत्व दिया गया है। आदि काल से ही हमारे संस्कृति में पर्यावरण को विशेष स्थान दिया गया है। पर्यावरण से संबन्धिक जानकार और शिक्षा विभिन्न कालखण्डों में ग्रन्थों एवं साहित्य के माध्यम से लोगों तक पहूँचाया जा रहा है। पर्यावरण की शुद्धता के महत्व को हमारे पूर्वजों ने बहुत पहले समझ लिया था। स्कंद पुराण में वरस्पति को पूज्य मानते हुए लिखा है- 'आर्युबलं यशो वर्चः प्रजाः पशुवसूनिच। ब्राह्म प्रज्ञा च मेघां च त्व नो देहि वनस्पति।। अर्थात् हे वनस्पति! आप मुझे आयु, बल, यश, तेज, संतति, पशुधन, वैदिक ज्ञान, प्रज्ञा और धारण शक्ति प्रदान करो।

यह धरती धारणी बनकर हमें निवास अथवा आश्रय प्रदान करती है, वसुंधरा बनकर अनेक खनिजों को धारण करते हुए अन्नोत्पत्ति में सहायक बनती है तथा विश्वम्भरा बनकर हमारा भरण-पोषण करते हुए तथा वस्त्रदि को उपलब्ध कराते हुए तापमान को नियंत्रित करने की सातर्थ्य प्रदान करती है।इसी साक्ष्य को अर्थर्वेद में यों स्पष्ट किया गया है- 'विश्वम्भरा वसुधानी प्रतिष्ठा। हिरण्यवक्षा जगतो निवेदानी।।

धरती पर विद्यमान सभी तत्व पर्यावरण की रचना कर रहे हैं। एक स्वच्छ पर्यावरण का अत्यंत प्रभावी ढंग से वर्णन करते हुए श्रीरामचरितमानस में गोस्वामी तुलसीदास इस प्रकार लिखते हैं-

सीतल मंद सुरभि बह बाऊ।

हरषित सुर संतन मन चाहू।।

वन कुसमित गिरि गन मनियार।

सवहि सफल सरिता मृत धारा।।

गगन बिमल संकुल सुर जूथा।

गावहि गुन गंधर्व बरूथा।।

बरबहिं सुमन सुअंजुलि साजी।

गहगहि गगन दुंदभि बाजी।।

वेदों में प्रकृति के विभिन्न अंग बादल, सूर्य, ऊष्मा, जल व वृक्षों से जुड़े मंत्र मिलते हैं। अर्थर्वेद में बेल और गूलर की तुलना सज्जन व उपकारी व्यक्ति से की है- 'महान व भद्रो बिल्बो, महान भद्र उदुम्बर।'

वैदिक मंत्रों के माध्यम से मनुष्य को शिक्षा दी गई है कि पशु-पक्षियों को अपने से हेय न समझें और नदियों, पर्वतों, वृक्षों और प्रकृति के अन्य अंगों में दैवीय शक्ति के दर्शन करें।

पर्वतों के प्रति सम्मान का उदाहरण गोस्वामी तुलसीदास के 'कुमार संभव' में प्राप्त होता है जहाँ हिमालय को देवात्मा और पृथ्वी को मानदण्ड कहकर उसकी प्रतिभा व्यक्त की गई है-

अस्पुत्तरक्ष्यां क्षिरी देवतात्मा

हिमालयो नाम नागाधिराजः।

पूर्वापरौ तोय तिथि विगाहय स्थितः

पृथिव्या इव मानदण्डः।

प्राचीन काल में मनुष्य की प्रकृति के प्रति अधिक निकटता रामचरित मानस के इस प्रसंग से प्रगट है-

देखत बन सर सैल सुहाए।

बाल्मीकि आश्रम प्रभु आए।।

राम देखि मुनि वासु सुहावन।

सुंदर गिरि कानुन जल पावन।।

सरनि सरोज विटप बन फूले।

गंजत मंजु मधुप रस भूले।।

खग मृग विपुल कोलाहल करहिं ।

विरहित बैर मुक्ति मन चरहि।।

प्रकृति से अपार प्रेम होने के कारण हमारे पूर्वज भी स्वच्छ जल एवं वायु से युक्त सुंदर उपत्यकाओं और उपवनों में निवास करते थे। इसी से जुड़ा रामचरित मानस के अयोध्या काण्ड से एक प्रसंग यों है-

चित्रकूट गिरि करहूँ निवासू।

तहं तुम्हार सब भांति सुपासु।।

सैलु सुहावन कानन चारु।

करि केहरि मृग विहग बिहारू।।

नदी पुनीत पुरान बखानी।

अतिप्रिया निध तप बल आनी।।

सुरसरि धारनाऊ मंदाकिनि।

जो सब पातक पोतक डाकिनि।।

रामचरित मानस ही नहीं रामायण, महाभारत और अन्य ग्रंथों में भी प्रकृति का महत्व बताया गया है जो हमारी प्राचीन प्रकृति की पुष्टि करते हैं जैसे प्रकृति के प्रति समर्पण के भाव दर्शाते हैं। इन ग्रन्थों में कुछ पात्रों को तो वृक्ष का रूप भी कहा गया है। मसलन बेल का संबंध बेढव व्यक्तित्व वाले आदि देव भगवान शंकर से जोड़ा गया है। श्री कृष्ण की तो सम्पूर्ण भंगिमा ही कदम्ब के वृक्ष के साथ जोड़ी गई है। रामायण में संकट की स्थिति में स्वयं सीताजी को वट की पूजा करते वर्णित किया गया है।

महाभारत काल में वृक्षों का महत्व उनकी उपयोगिता के आधार पर मानते हुए पाया जाता है। देव ग्रंथ में एक उदाहरण इस प्रकार है-

पुष्पैः सुरगणान वृक्षः

फलैश्चपि तथ पितृन।।

इसी प्रकार महाभारत का ही एक और उदाहरण है जिसमें गांव के अकेले हरे-भरे वृक्ष को चैत्य के समान पूजनीय बताया है-

एक वृक्ष दि यो ग्रामे

भवेत् पर्ण फलान्वितः।

चैत्यो भवति निर्झाति रचनीय सुपूजितः।।

छायया चातियं तात पूजयत्रि महीररुहः।

अर्थात् वृक्षों के पुष्पों से देवताओं, फल से पितरों, छाया से अतिथि की सेवा होती है अतः इनकी पूजा करो।

अति प्राचीन समय से यह नियम था कि जो व्यक्ति वृक्ष काटेगा उसे दण्ड दिया जाएगा। इस बात की पुष्टि स्मृति ग्रंथों में बड़े स्पष्ट रूप में मिलती है। उदाहरण के तौर पर याज्ञवल्कय स्मृति का यह उदाहरण-

प्ररोहिशाखिना शाखास्कन्धसर्वविदारणे

उपजीव्य दुभागा चदिशते दिगुणी दमः।।

अर्थात् जो व्यक्ति हरे वृक्ष की शाखा, तना उसे या समूल नष्ट करे तो उसे क्रमशः 20, 48 और 80 पण के जुर्माने से दण्डित किया जाए।

ठीक इसी प्रकार मनु स्मृति में वृक्ष के विभिन्न भागों को नष्ट करने वालों को उनकी उपयोगिता के आधार पर दण्डित करने का प्रावधान है। चरक संहिता में वन विनाश को राज्य के विनाश के समान बताया गया है। श्री हरिवंश पुराण में तो यहां तक लिखा है कि वृक्ष एवं लताओं को व्यर्थ में काटने वाले को ब्रह्म हत्या के समान पाप भुगतना पड़ता है यानी जो व्यक्ति बिना किसी औचित्य के हरी-भरी शाखाओं, तनों और पत्तियों तक को क्षति पहुंचाएगा, वह हत्यारा है।

याज्ञवल्क्य स्मृति में कहा गया है कि पालतू पशु की हत्या करने वाले को उतने दिन तक यातना भुगतनी पड़ती है जितने बाल उस पशु के शरीर पर होते हैं। चाणक्य ने अपने ग्रंथ अर्थशास्त्र में भी स्पष्ट तौर पर कहा है कि 'सरकार की ओर से जिनके न मारे जाने की घोषणा कर दी गई है और जो अभयारण्यों अथवा ऋषियों के निवास स्थान में रहते हैं ऐसे पशु, पक्षी और मछलियों को जो व्यक्ति पकड़े या उन पर प्रहार करे अथवा उन्हें मार डाले, सेनाध्यक्ष उसको कठोरतम दण्ड दिलवाए'। इसी प्रकार विष्णु संहिता में शिकार पर पाबंदी लगाने की बात कही गई है।

महान मौर्य सम्राट अशोक ने बौद्ध ध्धर्म से ज्ञान पा कर अपने शिला स्तंभों में अहिंसा का प्रचार किया। इन स्तंभों में स्पष्ट रूप से लिखा था –'अनादंभो प्राणानो अविहीसा भूताना' अर्थात् प्राणियों का वध और उनकी हिंसा न करें, चोट न पहुंचाएं क्योंकि धर्म का पालन इसी में है।

प्राचीन काल में सड़क और आवासीय क्षेत्रों के आसपास कूड़े के ढेर लगाना भी वर्जित था। चाणक्य के अर्थशास्त्र में स्पष्ट लिखा है 'सड़क पर मिट्टी या कूड़ा कर्कट डालने वाले व्यक्ति को दण्ड स्वरूप 1/8 पण देना होगा। इसके अलावा जो व्यक्ति गारा कीचड़ या पानी से सड़क पर बाधा डाले उसे 1/4 पण दण्ड दिया जाए और जो राजमार्ग पर यह अपराध करे उसे दुगना दण्ड देना होगा। राजमार्ग, पुण्य स्थान, कुएं, तालाब, देवालय, खजाना आदि स्थानों में जो मल का त्याग करे उसे उत्तरोत्तर एक पण अधिक दण्ड देना होगा। इन्हीं स्थानों पर मूत्र त्यागने वाले पर आधा पण का दण्ड होगा।'

जल प्रदूषण को रोकने के लिए मनु स्मृति में स्पष्ट लिखा है कि 'पानी में मूत्र, मैला, थूक, अपवित्र यानी जूठन, रक्त, विष न छोड़े'इसके बाद विभिन्न कालों में भी पर्यावरण के प्रति सजगता नजर आई। सिंधु घाटी की सभ्यता में भी पर्यावरण के प्रति सजगता के उल्लेख मिलते हैं। इस प्रकार वेदों, पुराणों और पौराणिक ग्रन्थों में पर्यावरण संरक्षण पर खूब सारी बाते की है। इन ग्रन्थों के सहारे हम तात्कालीन लोगों का प्रकृति और पर्यावरण संबन्धी विचार और प्रवृति मिलती है। जिसका बोध आज के मानव में नहीं है।

Unit – 6

बदलती जलवायु, बीमार होता पर्यावरणः

वैज्ञानिकों का मानना है कि ग्लोबल वार्मिंग के कहर से धरती की जलवायु में परिवर्तन हो रहा है। इससे वर्षा में कमी आएगी जिससे कृषि प्रभावित होगी। कहीं सूखे की तो कहीं बाढ़ की स्थिति उत्पन्न होगी। तापमान वृद्धि और वर्षा में कमी के कारण वन क्षेत्र घटेगा और जैव विविधता भी प्रभावित होगी। समुद्र किनारे के तटीय प्रदेशों के जलमग्न हो जाने का भी खतरा है। पृथ्वी के गरण होने का प्रत्यक्ष प्रमाण हिमनदों (ग्लेशियरो) के पिघलने से भी मिला है। गंगा नदी का मुख्य स्रोत है गंगोत्री जो गढ़वाल हिमालय का सबसे बड़ा ग्लेशियर है। यह भी एक किलोमीटर प्रतिवर्ष की दर से घटता पाया गया है। धरती के तापमान में निरंतर हो रही वृद्धि के कारणों की समीक्षा करने पर स्पष्ट हो जाता है कि इसके लिए प्रकृति से ज्यादा मानवजनित समस्याएं जिम्मेदार हैं। दिन-प्रतिदिन बढ़ रही औद्योगिक गतिविधियों के कारण वायुमंडल में कार्बन डाइआक्साइड की मात्रा और घटते वनों के कारण धरती के गर्माने की दर तेजी से बढ़ी है। गाड़ियों, कारखानें एवं रेफ्रीजरेटरों से निकलने वाले विशैले गैस एवं क्लोरोफ्लोरो कार्बन गैस से ओसोन के परत पर छेद हो रहे है जिससे पृथ्वी पर विशैल्ये गैस प्रवेश कर रहे हैं। इससे अम्ल वृष्टि की संभावनाएँ अधिक है।

बदलती जलवायु और बिगड़ते पर्यावरण ने लोगों की सेहत को प्रभावित करना शुरू कर दिया है। विश्व स्वास्थ्य संगठन द्वारा जारी एक रिपोर्ट के अनुसार आज दुनिया के 25 प्रतिशत रोगों और विकारों की जड़ पर्यावरण की बर्बादी है। वायुमंडल में इस तरह बदलती जलवायु के कारण मानव को न जाने कैसी-कैसी आपदाओं का शिकार होना पड़ेगा। आज समय आ गया है इस बदलती जलवायु पर नियंतण लाने की। अगर हमें पृथ्वी पर रहना है तो बढते तापमान पर काबू करना चाहिए नहीं तो आने वाले समय में हरियाली भूमि बंजर और रेगिस्तान बन जाएगा।

Unit – 7

बढ़ता शहरीकरण और डूबता पर्यावरणः

आज हमारे सामने ढेरों समस्याएं हैं लेकिन विश्व स्तर पर जनसंख्या में वृद्धि अपने आप में सबसे बड़ी समस्या है। जनसंख्या में वृद्धि जितनी अधिक होगी हमारी आवश्यकताएं उतनी ही तेजी से बढ़ेंगी। जनसंख्या में हो रही वृद्धि का अधिकतम बोझ उन क्षेत्रों पर है जहां पहले से ही सुविधाओं तथा संसाधनों की कमी है। इसका परिणाम यह है कि गरीब देशों में स्थिति बहुत तेजी से बिगड़ती जा रही है। जनसंख्या के बढ़ने की दर के साथ शहरीकरण की प्रक्रिया बहुत तेजी से बढ़ रही है। बढ़ते शहरीकरण का अनुमान इससे लगाया जा सकता है कि वर्ष 1950 में केवल न्यूयार्क ऐसा शहर था जिसकी आबादी एक करोड़ थी। इस समय चौदह ऐसे शहर हैं संसार में जिनकी आबादी एक करोड़ या उससे अधिक है।

बड़े शहरों का विकास भी औद्योगिक क्रांति से संबंधित रहा है। जैसे-जैसे औद्योगिक क्रांति की जड़ें मजबूत हुई वैसे-वैसे शहरीकरण भी बढा। शहरों में रोजगार के अवसर बढ़े और लोग बड़ी संख्या में शहरों की ओर आने लगे। अनुमान है कि शहरी जनसंख्या में वृद्धि का लगभग 40 प्रतिशत बाहर से आये लोगों के कारण होता है।

विकासशील अथवा कम विकसित राष्ट्रों के शहरों में बहुत बड़ी संख्या में लोग शहरों में तो रहते हैं परन्तु वह न्यूनतम आवश्यकताएं जैसे आवास, जल, स्वास्थ्य सुविधाएं इत्यादि भी प्राप्त नहीं कर पाते। अनेक बड़े शहर ऐसे हैं, जहाँ लाखों की संख्या में लोग फुटपाथ पर, पुलों के नीचे खाली पाइपों में या और कहीं जहां भी जगह मिल जाए वहां रहने को मजबूर हो जाते हैं। इन परिस्थितियों में रहने वाले लोगों को स्वस्थ्य की समस्याएँ उत्पन्न होती है। यहाँ रहने वाले लोग फेफडे की बीमारी, त्वचा की बीमारी तथा महामारियां से ग्रस्त है।

बढ़ते शहरीकरण के कारण एक और जो समस्या जन्म लेती है वह है वनों की कटाई की। जब शहर बनते हैं या कहना चाहिए कि उनका क्षेत्रफल बढ़ता है तो उसके लिए अधिक भूमि की भी जरूरत पड़ती है। जहाँ कहीं भी खाली जमीन हो उसे उपयोग में लाया जाता है। इसका परिणाम यह होता है कि खुले क्षेत्र, वन, पेड़-पौधे, मैदान, पार्क इत्यादि कम होते जाते हैं और जब शहर बाहर की तरफ फैलता है तो खेत, बाग, बगीचे, वन क्षेत्र, मैनग्रोव, झील, तालाब, समुद्री तट, नदी के आसपास की जमीन इत्यादि पर भी कंक्रीट के जंगल खड़े कर दिये जाते हैं। परिणाम यह होता है कि प्राकृतिक वातावरण घटता जाता है। साथ ही प्रदूषण भी बढता है।

आज मानव अति महत्वाकांक्षी हो गया है। रोजगार की तलाश या तरक्की की चाह में उसने शहरों की ओर पलायन किया है जिससे जहां शहरीकरण बढ़ रहा है वहीं पर्यावरण असंतुलित और असुरक्षित होता जा रहा है। यदि समय रहते पर्यावरणीय समस्याओं की ओर ध्यान नहीं दिया गया तो हमारा अस्तित्व तो खतरे में पड़ेगा ही साथ ही आने वाली पीढ़ियों को हम केवल बाढ़, सूखा, महामारी जैसी समस्याओ के साथ रिक्त प्राकृतिक संसाधनों का ही उपहार दे सकेंगे।

Unit – 8

निम्नलिखित प्रश्नो का उत्तर लिखिए –Weightage 2

प्र) अम्ल वृष्टि क्या है?

उ) पर्यावरण में कार्बन डाई-आक्साइड की मात्रा बढने से यह जलकणों में मिलकर वर्षा के जल को अम्लीय बना देता है जिससे उसका पानी हल्का हो जाता है। जिससे कोई हानि नहीं होता है। परंतु असामान्य स्थिति तब आयेगी जब बड़े-बड़े उद्योगों एवं वाहनों की सल्फर डाईआक्साइड, नाइट्रोजन आक्साइड आदि गैसें वायुमंडल में जाकर अनुकूल अभिक्रिया कर सल्फ्यूरिक तथा नाइट्रिक अम्ल उत्पन्न करती हैं। यह अम्ल बाद में वर्षा के साथ मिलकर पृथ्वी पर आते हैं जिससे पेड़-पौधों, वनस्पतियों और समुद्री जीवन को काफी क्षति पहुँचाती है। इस तहर से जब वर्षा के जल के साथ अम्लों की वर्षा होती है तो उसे अम्ल वर्षा या एसिड रेन कहते हैं। इसका असर वर्षा पर भी पड़ा है।

प्र) अल-निनो और 'ला-निनो'क्या है?

उ) वैज्ञानिकों के अनुसार पूर्वी प्रशांत क्षेत्र में जब हवा का उच्च दबाव पश्चिम की ओर अदृश्य रूप में एक झोंके की तरह बढ़ता है । झोंकों का वेग धीमा पड़ता है, तो समुद्र का जल पतला हो जाता है। जल पतला होने के पहले चरण में समुद्र की सतह के ऊपर की गर्म व पतले जल की परत से लगी नीचे के ठंडे और गाढ़े जल की 'थर्मोक्लाइन' नामक परत अलग होकर समुद्र की गहराई में उतरने लगती है। इससे समुद्र की ऊपरी परत गर्म होने लगता है। यही अल-निनो प्रभाव है, जिससे गर्मी अचानक बढ़ जाती है।

'अल-निनो' शब्द पेरू के उन मछुआरों की देन है, जिन्होंने यह महसूस किया कि क्रिसमस के दिनों में अचानक पेरूवियन समुद्र की सतह गर्म हो जाती है, जिससे पूरे वातावरण में गर्म धाराएँ बहने लगती है। ईसा मसीह के जन्म से मौसम की इस गतिविधि को जोड़ते हुए मछुआरों ने गर्म धाराओं की उत्पत्ति को 'अल-निनो' नाम दिया, जिसका स्पेनिश में अर्थ है 'शिशु' । अल निनो के कारण ही भूमंडल के एक हिस्से में बाढ़ और तूफान का बोलबाला रहता है, तो दूसरा हिस्सा भीषण सूखे और अकाल की चपेट में आ जाता है। अल निनो के कारण इंडोनेशिया और ऑस्ट्रेलिया के चारों ओर समुद्र की सतह आधा मीटर ऊंची हो जाती है। इसी दौरान पेरू के समुद्र तट पर भी ऐसा ही दृश्य उपस्थित हो जाता है।

ला-निनो, अल-निनो के ठीक बाद की प्रक्रिया है। ला निनो के चलते गर्म हुआ प्रशांत महासागर ठंडा होने लगता है। ला-निनो के प्रीभाव के कारण पूरी दुनिया का सामान्य मौसम बुरी तरह प्रभावित होता है और इसके प्रभाव से विभिन्न क्षेत्रों में जबर्दस्त बारिश होती है और इस कारण आने वाली बाढ़ तबाही मचाती है ।

प्र) ग्रीन हाऊस प्रभाव को समझाइए।

उ) ग्रीन हाउस गैसों की उपस्थिति के कारण वायुमंडल एक ग्रीनहाउस की भांति व्यवहार करता है। वायुमंडल प्रवेशी सौर विकिरण का पारेषण भी करता है किंतु पृथ्वी की सतह से ऊपर की ओर उत्सर्जित होने वाली अधिकतम् दीर्घ तंरगों को अवशोषित कर लेता है। वे गैसें जो विकिरण की दीर्घ तरंगों को अवशोषित कर लेता है। वे गैसें जो विकिरण की दीर्घ तरंगों का अवशोषण करती हैं, ग्रीनहाउस गैसें कहलाती हैं। वायुमंडल का तापन करने वाली प्रक्रियाओं को सामूहिक रूप से 'ग्रीनहाउस प्रभाव' कहा जाता है।

प्र) अल निनो और ला निनो से पर्यावरण पर कैसा असर होता है?

उ) अल निनो और ला निनो पृथ्वी के मौसम और जलवायु परिवर्तन में महत्वपूर्ण योगदान है। अल निनो के कारण ही भूमंडल के एक हिस्से में बाढ़ और तूफान का बोलबाला रहता है, तो दूसरा हिस्सा भीषण सूखे और अकाल की चपेट में आ जाता है। ला निनो के चलते गर्म हुआ प्रशांत महासागर ठंडा होने लगता है। ला-निनो के प्रभाव के कारण पूरी दुनिया का सामान्य मौसम बुरी तरह प्रभावित होता है और इसके प्रभाव से विभिन्न क्षेत्रों में जबर्दस्त बारिश होती है और इस कारण आने वाली बाढ़ तबाही मचाती है । मौसम विज्ञानी मानते हैं कि ला-निनो, अल-निनो से भी ज्यादा नुकसानदायक है।

प्र) बढ़ते शहरीकरण से प्राकृतिक संसाधन कैसे नष्ट होती है?

उ) शहरीकरण या शहर में बढते जनसंख्या के कारण शहर का विस्तार फैलने लगते है। जब शहर का क्षेत्रफल बढता है या शहर का विस्तार होता है तो उसके लिए अधिक भूमि की भी जरूरत पड़ती है। जहाँ कहीं भी खाली जमीन हो उसे उपयोग मे लाया जाता है। इसका परिणाम यह होता है कि खुले क्षेत्र, वन, पेड़-पौधे, मैदान, पार्क इत्यादि कम होने लगते हैं और जब शहर बाहर की तरफ फैलता है तो खेत, बाग, बगीचे, वन क्षेत्र, मैनग्रोव, झील, तालाब, समुद्री तट, नदी के आसपास की जमीन इत्यादि पर भी कंक्रीट जंगल खडे कर दिये जाते हैं। अतः यह प्राकृतिक संसाधन नष्ट होने लगते हैं। साथ ही इन प्राकृतिक संसाधनों को अपने आवास-व्यवस्था बनये हुए जीव-जंतु भी नष्ट होने लगते हैं।

प्र) भूमिगत जल की उपयोगिता किन-किन क्षेत्रों में की जाती है?

उ) भूमिगत जल संपदा का उपयोग हम दैनिक कार्य और सिंचाई के लिए करते हैं। भूगर्भीय जल के विशाल स्रोत पंजाब, हरियाणा, उत्तर प्रदेश, बिहार, पश्चिम बंगाल एवं तटीय मैदानी इलाकों में अनुमानित किए गए हैं। कुंओं और नलकूपों के द्वारा भूमिगत जल का प्रयोग किया जाता है।

प्र) भारत की जल संपदा का संक्षिप्त विवरण दीजिए।

उ) भारत में जल की प्रचुर संपदा है। समूचे देश में वर्षा से साल भर में लगभग 109 सेंटीमीटर जल की प्राप्ति होती है, दूसरे शब्दों में करीब 3,700 अरब घनमीटर जल की मात्रा। इसमें से 20 प्रतिशत पानी जमीन द्वारा सोख लिया जाता है, 35 प्रतिशत भाप बनकर उड़ जाता है और केवल 45 प्रतिशत नदियों में समाता है। भारत में 14 विशाल, 44 मध्यम एवं 55 छोटी नदियाँ हैं जो देश के लगभग 91 प्रतिशत क्षेत्र की सिंचाई के लिये पानी की आपूर्ति करती हैं तथा दक्षिण-पश्चिम मानसून के कारण यहाँ भारी वर्षा भी होती है। एक वर्ष में हुई वर्षा और हिमिपात औसतन 114 सेमी. से 4000 घन किमी. पानी प्रति वर्ष मिलता है। भू-जल के पुनर्भरणीय जल संसाधन लगभग 600 घन किमी.आंके गये हैं, जिनसे एक वर्ष में लगभग 450 घन किमी. पानी का उपभोग किये जाने का अनुमान है।

प्र) ओजोन परत क्या है? यह किस प्रकार अपक्षयित होती है?

उ) ओज़ोन 'O_3' अणु ऑक्सीजन के तीन परमाणुओं से बनते हैं जबकि सामान्य ऑक्सीजन के अणु में दो परमाणु होते हैं। जहाँ ऑक्सीजन सभी प्रकार के वायविक जीवों के लिए आवश्यक है, वहीं ओजोन एक घातक विष है। परंतु वायुमंडल के ऊपरी स्तर में ओज़ोन एक आवश्यक प्रकार्य संपादित करती है। यह सूर्य से आने वाले पराबैंगनी (uv) विकरण से पृथ्वी को सुरक्षा प्रदान करती है। यह पराबैंगनी विकरण जीवों के लिए अत्यंत हानिकारक है। वायुमंडल के उच्चतर स्तर पर पराबैंगनी विकिरण के प्रभाव से ऑक्सीजन 'O_2' अणुओं से ओज़ोन बनती है। 1980 से वायुमंडल में ओज़ोन की मात्रा में तीव्रता से गिरावट आने लगी। क्लोरोफ्लुरो कार्बन (CFC) जैसे मानव संश्लेषित रसायनों को इसका मुख्य कारक माना गया। इनका उपयोग रेफ्रीजेरेटर एवं अग्निशमन के लिए किया जाता है।

प्र) झुग्गी-झोपड़ी में रहने वाले लोगों में श्वास संबंधित रोग अधिक पाये जाते हैं। क्यों?

उ) झुग्गी-झोपड़ी में रहने वाले लोगों में श्वास संबंधित रोग अधिक पाये जाते हैं। क्योंकि अधिकतर झुग्गीयाँ मुफ्त की जमीन पर बनायी जाती हैं और मुफ्त की जमीन सदैव ही शहर के बाहर कठिन परिस्थितियों जैसे पहाड़ी ढलानों पर बसे इलाकों में, नदी-नाले इत्यादि के आसपास, सड़कों के किनारे या ऐसी ही दूसरी जगहों पर मिल पाती है।

ये लोग खाना पकाने के लिए किसी भी तरह के ईधन का उपयोग करते हैं। ये लोग विशेष रूप से लकड़ी, उपला, टूटे बक्स, कागज, सूखे पत्तें, यहां तक कि प्लास्टिक तथा रबर का उपयोग करने से भी नहीं चूकतें। जिनकी स्थिति थोड़ी अच्छी होती है वह मिट्टी के तेल का उपयोग करते हैं। इस प्रकार के ईधन के उपयोग के कारण वायु प्रदूषण बढ़ता जाता है। छोटी सी जगह जहाँ हवा के आने –जाने के लिए पर्याप्त साधन नहीं होता वहीं लोग रहते भी हैं और वहीं खाना भी बनाते हैं। यही कारण है कि इन झुग्गी-झोपड़ी में रहने वाले लोगों में श्वास संबंधित रोग बहुत अधिक पाए जाते हैं।

प्र) झुग्गी-झोपड़ी में रहने वाले लोगों में बीमारी अधिक पाये जाते हैं। क्यों?

उ) अधिकतर झुग्गीयाँ मुफ्त की जमीन पर बनायी जाती हैं और मुफ्त की जमीन सदैव ही शहर के बाहर कठिन परिस्थितियों जैसे पहाड़ी ढलानों पर बीहड़ इलाकों में, नदी-नाले इत्यादि के आसपास, सड़कों के किनारे या ऐसी ही दूसरी जगहों पर मिल पाती है। इनके लिए जीवन की सामान्य सुविधाएँ भी उपलब्द नहीं हो पाती। इसका परिणाम होता है कि गरीबों को पीने, पकाने, नहाने, धोने इत्यादि के लिए साफ पानी नहीं मिलता और चूँकि पानी के बगैर रहा नहीं जा सकता इसलिए पानी का जो भी स्रोत मिलता है उसका उपयोग करने पर वह लोग मजबूर हो जाते हैं। अधिकतर जिस प्रकार का पानी उन्हें मिलता है वह सुरक्षित नहीं होता और परिणाम यह होता है कि अनेक प्रकार के रोगाणु ऐसे लोगों के शरीर तक पहुँचते हैं। इस प्रकार शौच इत्यादि की पर्याप्त व्यवस्था न होने के कारण लोग जहाँ-तहाँ शौच करने पर मजबूर होते हैं। चूंकि नगरपालिका वाले ऐसे क्षेत्रों पर पर्याप्त ध्यान नहीं देते, ऐसे क्षेत्रों में सफाई इत्यादि की भी व्यवस्था सही ढंग से नहीं हो पाती। परिणाम यह होता है कि पूरे वातावरण में गंदगी फैली रहती है। गंदगी भरा यह वातावरण बीमारियों को फलने-फूलने का पूरा पूरा अवसर देता है। इस लिए झुग्गी-झोपड़ी में रहने वाले लोगों में बीमारी अधिक पाये जाते हैं।

Unit – 9

निम्नलिखित प्रश्नो का उत्तर लिखिए –Weightage 4

प्र) वर्तमान संदर्भ में बदलती जलवायु से पर्यावरण पर किस तरह का प्रभाव पडता है?

उ) मानव के भौतिक विकास ने पर्यावरण पर दुष्प्रभाव डाला है। वर्तमान संदर्भ में औद्योगिकरण तथा भूमण्डलीकरण ने मानव जीवन में विकास का दर बढने लगा और इन ज़रूरतों की पूर्ती के लिए अधिक से अधिक कारखानों की स्थापना और उत्पादों की बडैती होने लगा। शहरों का विसाक होने लगा। शहर फैलने लगा। लोगों की आबादी बढने लगी। पृथ्वी पर प्रदूषण की मात्रा अधिक होने लगा। साथ ही साथ प्रदूषण फैलाने वाले यंत्रों और उपकरणों की संख्या बढने लगा। पेड़ों की संख्या गटने लगा, जंगल नष्ट होने लगा। पृथ्वी में कार्बनडयओक्साइड की मात्रा बढने लगी। रेफ्रीजरेटरों से निकलने वाले सी एफ सी के कारण समूचे भूमंडल में ओजोन परत में छेद बन गया। इनके अलावा कारखानों की चिमनी से निकलने वाला धुआँ और राख, वाहनों से निकलने वाली गर्म गैस भी वायुमंडल में ही समा रही है। अनेक औद्योगिक इकाइयाँ, ताप बिजली घर पर्यावरण में गर्मी समाहित कर रहे हैं। इस तरह वायुमंडल में हानिकारक गैसों के जाने से धरती के तापमान बढने लगा। धरती की संतुलित अवस्था बिगडने लगी। इससे जलवायु में बदलाव आने लगा।

जलवायु में बदलाव से पर्यावरण पर विभिन्न विनाशकारी प्रभाव पडने लगा। हिमनदों (ग्लेशियर) पिघलने लगे। इन हिमनदों के पिघलने से नदियों में जल कम हो सकता है। गर्मी बढने से हिमनदों का नामोनिशान भी नहीं बचेगा। इससे शुद्ध जल की कमी हो सकती है। हाल ही में किये गए सर्वेक्षण से ऐसा पता चलता है कि पूर्वी हिमालय के कंचनजंगा ग्लेशियर, कुमाऊ ग्लेशियर और कश्मीर ग्लेशियर की ऊंचाईयाँ दिन-पर-दिन कम होती जा रही हैं। गंगा नदी का मुख्य स्रोत है गंगोत्री जो गढवाल हिमालय का सबसे बड़ा ग्लेशियर है। यह भी एक किलोमीटर प्रतिवर्ष की दर से घटता पाया गया है। ग्लोबल वार्मिग से हिमालय के ग्लेशियर जिस तेजी से पिघलते जा रहे हैं उससे ऐसा लगता है कि सन् 2035 तक ये पूर्णतः नष्ट हो जायेंगे। इससे उत्तर भारत की सभी नदियाँ सूख जाएगी। इससे ग्लोबल वार्मिंग से क्षति पहूँचती रही तो पानी का संतुलन बिगड़ जायेगा और हमारी जलवायु भी अस्थिर हो जायेगी। इसके अतिरिक्त उत्तरी और दक्षिणी ध्रूव में हिम पिघल रहे हैं। जिससे समुद्र का जल स्तर ऊंचा होता जाएगा। समुद्र ऊपर उठने से भूमी कम होता जाएगा। बढती आबादी से भूमि में रहने के लिए जगह कम पड रहा है। इस संदर्भ में समुद्र अगर भूमी को निघल जाए तो भविष्य क्या होगा। जलवायु में बदलाव का असर कहीं सूखे, तो कहीं अतिवृष्टि, तो कहीं वर्षा के समय-चक्र में अजीबोगरीब परिवर्तन के रूप में भी होगा जिससे पृथ्वी पर जीवन प्रणालियों के लिए गहरा संकट उत्पन्न होगा।

बदलती जलवायु और बिगड़ते पर्यावरण ने लोगों की सेहत को प्रभावित करना शुरू कर दिया है। प्रदूषण से कैनसर, त्वचा की बीमारी, नए-नए बीमारी, मलेरिया की वापसी आदि। पर्यावरण में साँप, मेंढक आदि कम होने से मच्छर बढ रहे हैं। लोगों द्वारा जल और मृदु प्रदूषण से मलेरिया फैलाने वाले मच्छरों की संख्या बढ गयी है।

जलवायु परिवर्तन का असर बहुत व्यापक होता है। अचानक कहीं अतिशय वर्षा हो जाना और कहीं भीषण सूखा पड़ जाना जलवायु परिवर्तन का ही संकेत है। उदाहरण के लिए आज से सात हजार साल पहले थार मरुस्थल में खूब वर्षा होती थी। वहाँ हरे-भरे जंगल थे। तालाब और नदियाँ थीं। लेकिन जलवायु परिवर्तन के चलते नदियाँ सूख गईं, वृक्ष गायब हो गए और वहाँ की धरती रेगिस्तान में तब्दील हो गई।

फैक्ट्रियों की चिमनी से निकलने वाला धुआं और राख, वाहनों से निकलने वाला जहरीला धुआं, घरों और कार्यालयों में लगे एयरकंडीशनरों से निकलने वाली गर्म गैस भी वायुमंडल में ही समा रही है अनेक औद्योगिक इकाइयां, ताप बिजली घर पर्यावरण में गर्मी समाहित कर रहे हैं। इस तरह वायुमंडल में हानिकारक गैसों के जाने से धरती के तापमान में परिवर्तन आया है। तापमान में परिवर्तन का असर जलवायू पर पडता है। इससे पर्यावरण ही नहीं मनुष्य भी भीषण रोग से ग्रस्त है।

प्र) बढ़ता शहरीकरण से पर्यावरण कैसे प्रभावित होती है।

उ) विश्व स्तर पर जनसंख्या में वृद्धि अपने आप में सबसे बड़ी समस्या है यह एक सामान्य बात है। जनसंख्या में वृद्धि जितनी अधिक होगी हमारी आवश्कताएँ उतनी ही तेजी से बढ़ेंगी। जनसंख्या के बढ़ने की दर के साथ शहरीकरण की प्रक्रिया बहुत तेजी से बढ़ रही है। धीरे-धीरे पूरा विश्व छोटे बड़े शहरों में समाता जा रहा है। जल्द ही स्थिति यह होगी कि इस धरती पर आधे से अधिक लोग शहरों में रह रहे होंगे। शहरी जनसंख्या की वृद्धि गरीब देशों में ज्यादा हो रही है। कम विकसित राष्ट्रों में शहरीकरण की वृद्धि दर 3.5 प्रतिशत है जो विकसित राष्ट्रों में शहरीकरण की दर से बहुत अधिक है।

शहरों में लोगों को काम के अधिक अवसर प्राप्त होते हैं। वह अपनी क्षमता का बेहतर उपयोग कर पाते हैं। शहरों में यातायात, संचार, स्वास्थ्य, शिक्षा इत्यादि से संबंधित अवसर अधिक हैं । लेकिन शहरों में अधिक संख्या में लोगों के आने से वहाँ उनकी न्यूनतम आवश्यकताएँ जैसे आवास, जल, स्वास्थ्य सुविधाएँ इत्यादि भी प्राप्त नहीं कर पाते। यहाँ पीने, पकाने, नहाने, धोने इत्यादि के लिए साफ पानी नहीं मिलता और पानी का जो भी स्रोत मिलता है उसका उपयोग करने पर लोग मजबूर हो जाते हैं। अधिकतर पानी सुरक्षित नहीं होता और परिणाम यह होता है कि अनेक प्रकार के रोगाणु लोगों के शरीर तक पहुँचते हैं। इसी प्रकार शौच इत्यादि की पर्याप्त व्यवस्था न होने के कारण लोग जहाँ-तहाँ शौच करने पर मजबूर होते हैं। सफाई इत्यादि की भी व्यवस्था सही ढंग से नहीं हो पाती। परिणाम यह होता है कि पूरे वातावरण में गंदगी फैली रहती है। गंदगी भरा यह वातावरण बीमारियों को फलने-फूलने का पूरा पूरा अवसर देता है। पूरे शहर में महामारियाँ फैलने लगती है। गुजतार में आए प्लेग इसका उदाहरण है। ईधन का उपयोग से वायु प्रदूषण।

शहरों में क्षेत्रफल के आधार पर आबादी हमेशा अधिक होती है और जहाँ भी भीड़ अधिक होगी वहाँ बीमारियों के फैलने की सम्भावना अधिक होती है खासकर उन बीमारियों की जो हवा के माध्यम से फैलती हैं और इनका शिकार शहर में रहने वाला कोई भी व्यक्ति हो सकता हे। इसी प्रकार शहर में यातायात, कारखाना और घरेलू ईधन का उपयोग आदि से निकलने वाले कार्बन मोनोऑक्साइड, नाइट्रोजन के आक्साइड, सल्फर डाइऑक्साइड, ओजोन सीसा, धूल कण इत्यादि के प्रदूषण की सम्भावना अधिक होती है। शहरीकरण के द्वारा प्रदूषण के साथ-साथ तापमान में भी परिवर्तन होने लगते हैं। जिसका अनुभव हम आज कर रहे हैं।

बढ़ते शहरीकरण के कारण एक और जो समस्या जन्म लेती है वह है वनों की कटाई की। गाँव से शहर में लोगों के आने से शहर का विस्तार होता रहता है। यह विस्तार आस-पास के जंगलों को काट कर और खेतों को मिटाकर किया जाता है। जहाँ कहीं भी खाली जमीन हो उसे उपयोग में लाया जाता है। इसका परिणाम यह होता है कि खुले क्षेत्र, वन, पेड़-पौधे, मैदान, पार्क इत्यादि कम होते जाते हैं और जब शहर बाहर की तरफ फैलता है तो खेत, बाग, बगीचे, वन क्षेत्र, मैनग्रोव, झील, तालाब, समुद्री तट, नदी के आसपास की जमीन इत्यादि पर भी कंक्रीट के जंगल खड़े कर दिये जाते है। मनुष्य इस सब पर अपना अधिकार जमा लेता है। इस प्रक्रिया में पर्यावरण में प्राप्त अन्य जीवियों का आवास व्यवस्था नष्ट हो जाती है। आवास-व्यवस्था के नष्ट होने पर जीव-जंतू विलुप्त होने लगते है और कभी – कभी किसी एक प्रकार के जीव नस्ल की संख्या बढ़ने लगती है। आवास-व्यवस्था के नष्ट होने पर जंगली जानवर शहर की तरफ उतरेग। पर्यावरण की संतुलित अवस्था नष्ट होने लगते है। शहरीकरण से प्राकृतिक संसाधन नष्ट हो जाते हैं।

आज मानव अति महत्वाकांक्षी हो गया है। रोजगार की तलाश या तरक्की की चाह में उसने शहरों की ओर पलायन किया है जिससे जहाँ शहरीकरण बढ़ रहा है वहीं पर्यावरण असंतुलित और असुरक्षित होता जा रहा है। विश्व भर में यह देखा और महसूस किया जा रहा है कि शहरीकरण के बढते पर्यावरण डूबता जा रहा है।

Unit – 10

जल, जीवन और पर्यावरणः

मानव शरीर जिन पांच तत्वों से मिलकर बना है उनमें से है जल। अरस्तू के अनुसार समूचे ब्रह्मांड का निर्माण मिट्टी, हवा, अग्नि और जल नामक चार घटकों से हुआ है। जल को जीवन का पर्यायवाची माना जाता है। एक समय था जब यह जल हमारे चारों ओर महासागरों, झीलों, नदियों और प्रपातों में प्रचुर मात्रा में मौजूद था लेकिन दुख की बात यह है कि इस अथाह संपदा का इस्तेमाल इस ढंग से किया गया कि इसका सदुपयोग कम और दुरुपयोग ज्यादा हुआ। नतीजा यह हुआ कि अन्य प्राकृतिक संसाधनों की तरह हम आज शुद्ध पेय जल के लिए भी तरसने लगे हैं।

पानी की खपत दिन पर दिन बढ़ती जा रही है। आज विश्व की 6 अरब से अधिक आबादी उपयोग करने योग्य कुल जल में से 54 प्रतिशत का उपयोग कर रही है। विश्व जल विकास रिपोर्ट के अनुसार इक्कीसवीं शताब्दी ऐसी शताब्दी है जिसमें सबसे प्रमुख समस्या जल की किस्म और प्रबंधन की है। प्रदूषित पेयजल और गंदगी के कारण होने वाले रोगों से हर वर्ष लगभग 22 लाख लोग मौत के मुंह में समा जाते हैं। रिपोर्ट में दूसरा बड़ा मुद्दा है भूख का। यह समस्या भी कहीं न हीं पानी से ही जुड़ी है। अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर किए गए अध्ययन के अनुसार 1000-5000 घनमीटर प्रतिवर्ष प्रतिव्यक्ति जल की वर्तमान उपलब्धता वाले अनेक देशों में सन् 2030 तक जल की उपलब्धता का यह आंकड़ा 1000 घनमीटर प्रतिवर्ष प्रतिव्यक्ति से भी नीचे जा पहुंचेगा।

जल की जीवनदायी क्षमताएं अभूतपूर्व हैं, पृथ्वी पर मानव जीवन को प्रभावित करने में जल का मुख्य हाथ रहा है। मानव इतिहास इसकी उपलब्धता और अनुपलब्धता पर ही निर्भर है। विश्व की प्रमुख सभ्यताएँ नदियों के किनारे ही बसती आई हैं। संसार की अनेक ऐतिहासिक घटनाएं, विवाद और समझौतों के मूल में जलीय धरती ही रही है। आज के युग की अर्थव्यवस्था इतनी जटिल हो चुकी है कि प्रत्येक देश अपने संसाधनों की ओर काफी सजग हो चला है। इसीलिए राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय नदी घाटी परियोजनाएं और उनको लेकर विवाद भी अस्तित्व में आए हैं।

भारत में जल की प्रचुर संपदा है, यह अलग बात है कि आज हम शुद्ध पेयजल के लिए तरस रहे हैं। समूचे देश में वर्षा से साल भर में लगभग 109 सेंटीमीटर जल की प्राप्ति होती है। परंतु भारत में वर्षा वितरण बहुत ही अनियमित और अनिश्चित होने के साथ-साथ केवल कछु ही महीनों में सीमित होता है। अतः अनिश्चित वर्षा वाले क्षेत्रों में कृषि के लिए पानी की आपूर्ति के लिए सिंचाई से बढ़कर उत्तम साधन और कोई नहीं है। पर्याप्त सिंचाई व्यवस्था से सूखा प्रभावित भागों में कृषि को स्थाई रूप प्रदान किया जा सकता है। साथ ही अधिक जल की आवश्यकता वाली लाभदाई फसलों की खेती भी सब जगह संभव हो सकती है।

भारत में प्राचीन काल से ही सिंचाई की अनेक व्यवस्थाएं पाई जाती है। सिंधु घाटी की सभ्यता का विकास सिंचाई के आधार पर ही हुआ था। आधुनिक सिंचाई व्यवस्था का सूत्रपात सन् 1859 में हुआ जब दोआब नहर का निर्माण किया गया। सन् 1905 – 1917 में रावी, झेलम तथा चेनाब नदियों को नहरों द्वारा मिला दिया गया। सिंधु नदी पर सन् 1922 में सक्कर बराज का निर्माण किया गया जिसमें से सात बड़ी नहरें निकालकर सिंधु घाटी के विशाल क्षेत्र को सींचने का प्रबंध किया गया। इसी बीच, देश के अन्य भागों में

भी कई नहर प्रणालियां विकसित हो चुकी थीं। भारत की कुल सिंचाई क्षमता, सन् 1951 से सन् 2000 के बीच 226 लाख हेक्टेयर से बढ़कर 947 लाख हेक्टेयर हो गई है। नहरों के अलावा यहाँ सिंचाई के लिए भूमिगत जल का उपयोग किया जाता है। इसके अतिरिक्त बहुद्देशीय परियोजनाएं अपनाकर जल के प्राकृतिक स्रोतों का प्रयोग अनेक क्षेत्रों में किया जा रहा है जिसमें विद्युत उत्पादन प्रमुख है। दामोदर घाटी परियोजना , हीराकुंड, गोविंद बल्लभ सागर, भाखरा नांगल, नागार्जुन सागर इत्यादि प्रमुख बहुद्देशीय परियोजनाएं है।

जल जीवन का आधार। इसके बिना जीना असंभव है। लेकिन मानव के स्वार्थ विकास ने प्राकृतिक संसाधनों के प्रति अंधा बना दिया है। विश्व में औद्योगिक क्रांति के बाद से मनुष्य ने प्राकृतिक जल संसाधनों को भीषण रूप से प्रदूषित किया है। पेट्रोलियम पदार्थों का रिसाव, औद्योगिक अपशिष्टों का विसर्जन, रासायनिक अपद्रव्यों का मिश्रण, घरेलू सीवर का विसर्जन तथा अन्य अनेक कचरे की मिलावट से विकसित ओर विकासशील दोनों देशों में जल प्रदूषण बढ़ता ही जा रहा है। भारत की सभी नदियाँ प्रदूषित है। इससे पानी का अभाव होता जा रहा है। बड़े शहरों में पानी की समस्या हो रही है। सन् 1977 में अर्जेंटाइना में आयोजित विश्व जल सम्मेलन में यह अनुमान लगाया गया था कि यदि समूचे विश्व में उपलब्ध जल को आधा गैलन बोतल के बराबर माना जाए तो स्वच्छ व शुद्ध जल की मात्रा आधे चम्मच के बराबर होगी।

पीय जल की समस्या से झूंझने के कारण हमने प्राकृतिक संसाधनों की रक्षा एवं संरक्षण के महत्व को जान लिया है। जल का संग्रह और संरक्षण दोनों ही आवश्यक हैं और इससे भी जरूरी है इस बारे में जागरूकता लाना। जल संरक्षण के प्रति चेतना जागृत करने के लिए अनेक प्रयास जारी हैं। जल संरक्षण का मूल तत्व है वर्षा के जल को संग्रह करके, तथा जल प्रवाह को नियमित करके जल से अधिकतम लाभ प्राप्त करना तथा स्वच्छ जल का निश्चित भंडार बनाए रखना। अत्यधिक प्रयोग के कारण भूमिगत जल स्तर लगातार कम होता जा रहा है जो एक चिंता का विषय है। हाल ही में इस क्षेत्र में बहुत जागरूकता आई है। लोग जल संरक्षण के पारंपरिक रीतियों को अपनाने लगे हैं। राजेंद्र सिंह (मेगसेसे एवार्ड से सम्मानित) ने राजस्थान अंचल के ग्रामीण युवकों को इकट्ठा कर हमारी प्राचीन बहुमूल्य जल संरक्षण विधियों को दुबारा क्रियाशील बनाया है, इससे पानी की समस्या का काफी हद तक निवारण हुआ है। फिर भी देश के कई इलाकों में सूखे से पानी की कमी पड़ता है। लम्बे समय तक वर्षा की कमी मौसमी सूखे के अन्तर्गत आती है। हाइड्रोलॉजिकल यानी जलीय सूखा भूजल स्तर में गिरावट, नदियों एवं नालों के सूखने को इंगित करता है जिनके कारण पेयजल, दैनिक उपभोग सिंचाई एवं औद्योगिक उपयोगों के लिए जल उपलब्ध नहीं होता। इसी प्रकार एग्रीकल्चरल यानी कृषि सूखा तब माना जाता है जब कम वर्षा या पानी के स्रोतों के सूख जाने के कारण मूल क्षेत्र में नमी बिल्कुल खत्म हो जाती है। मिट्टी सूखकर भुरभुरी हो जाती है और पानी के अभाव में खेतों में पड़ी दरारें किसानों को निराशा के दलदल में धकेल देती है क्योंकि बोयी हुई फसल पर्याप्त पानी के अभाव में उग नहीं पाती।

पानी ही वो कुंजी है जिसकी कमी से सूखा पड़ता है और जो प्रकृति में बहुतायत में मिलता है। पृथ्वी की सतह लगभग 70.8 प्रतिशत पानी से घिरी हुई है, फिर भी सूखे की समस्या विश्वव्यापी है। कहीं पृथ्वी में अथाह पानी है, तो कहीं सुदूर तक फैला मरूस्थल, कहीं खारे पानी के हिलोरें मारते विशाल समुद्र हैं तो कहीं मीठे पेय जल से लबालब नदियाँ। लेकिन इतने अथाह पानी का सिर्फ एक अंश ही मानव उपयोग में ला पाता है।भारत इस मामले में सौभाग्यशाली है कि उसे प्रकृति ने पर्याप्त जल संसाधन प्रदान किये हैं। इस देश में 14 विशाल, 44 मध्यम एवं 55 छोटी नदियाँ हैं।

अब समय निकल गया है, अगर भविष्य में हमें शुद्ध पीये जल प्राप्त करना है तो हमें पर्यावरण का संरक्षण करना है। जल के उपयोग में नियंत्रण लाना है।

Unit – 11

सही पर्यावरण से बिछड़ते जीवः

सभ्यता की सीढ़ियां चढ़ते मानव ने जहां एक ओर वृक्षों को अपनी आवश्यकता के अनुसार उपयोग किया तो वहीं जीव जंतुओं को भी अपना साथी बनाया। इनमें कुछ को उसने बतौर सवारी चुना, कुछ को सुरक्षा में लगाया, कुछ को घरेलू बना अपने आहार तथा अन्य मतलब की वस्तुएं प्राप्ति के लिए रखा तो कुछ जीव ऐसे भी थे जिन्हें सीधे आहार में शामिल किया। जिन पशुओं को हमने वनों से लाकर अपने साथ रखकर सभ्य बनाया, उन्होंने हमारा साथ दिया या फिर जिन वन्य जीवों को हमने प्राणी उद्यानों में ला बिठाया उनके प्रति हमारे दायित्व हैं। उन्हें संरक्षण देना ही सब कुछ नहीं सही परिवेश देना भी जरूरी है। जिन वन्य जीवों की हमने प्राकृतिक गोद छीनी और अपनी सोच के अनुरूप संरक्षण दिया लेकिन क्या उन्हें हम उनका परिवेश दे पाए, शायद नहीं। आज प्राणी उद्यानों में कैद कितने ही वन्य जीव शारीरिक और मानसिक प्रताड़ना में जी रहे हैं या कहें तिलतिल मर रहे हैं।

देश में स्थापित कृत्रिम वन्य प्राणी स्थलों में कुछ वन्य जीव ऐसे भी है जो समाप्ति के कगार पर हैं मसलन मणिपुरी हिरण, बब्बर शेर, काला हिरण, साम्बर, मगरमच्छ, गौंडा, बफीली तेंदुआ, शेरपूंछ बंदर वगैरह। इस प्राणियों के संरक्षण के लिए हमने देश के विभिन्न भागों में वन्य जीव शरण स्थल बना तो लिए हैं मगर ये अनुकूल परिवेश तक भी नहीं दे पा रहे है। अध्ययन बताते हैं कि जब वन्य जीव शारीरिक और मानसिक प्रताड़ना में जीवन बिताते हैं तो उनका शारीरिक विकास नहीं हो पाता। साथ ही उनकी प्रजनन क्षमता भी प्रभावित होती है। इन उद्यानों में दर्शकों द्वारा तंग किए जाने और उनकी भारी भीड़ भी इन जीवों को मानसिक प्रताड़ना देती है।

मौसम में परिवर्तन के अनुसार जीव-जंतुओं का आवास व्यवस्था में परिवर्तन होता है। विशेष कर पक्षियाँ नए-नए जगहों की तलाश में निकलते हैं। इन पक्षियों को प्रवासी पक्षी कहते हैं। ये पक्षियाँ मौसम के बदलते तेवर के साथ ही अपने बचाव के लिए घर छोड़ देते हैं और हजारों मील की लंबी यात्रा तय कर दूर देश जा पहुंचते हैं, जहां उनकी सुरक्षा और खान-पान का पूरा इंतजाम किया जाता है। साइबेरियाई सारस इसका उदाहरण है। इन पक्षियों के बारे में अध्ययन तथा अनुसंधान करने के लिए मनुष्य उनके पंखों में ट्रांसमीटर लगाते हैं जिससे इनके मार्ग तथा पर्यावरण की जानकारी हासिल करते हैं।

मानव अपने मनोरंजन और सजावट के लिए प्राणियों का हत्या करते हैं। कभी कभी जीवों को सामूहिक आत्महत्या भी देखे जा सकते है। भारतीय जीव जंतु सर्वेक्षण के वैज्ञानिक डॉ. सुणीर सेनगुप्ता ने इस दिशा में महत्वपूर्ण शोध कार्य किए हैं। उन्होंने 20 पक्षियों को प्रति घण्टे की दर से आत्महत्या करते हुए देखा है।

पर्यावरण में जानवरों एवं पक्षियों का महत्वपूर्ण योग्दान है। ये मौसम की भविष्यवाणी देते हैं। अगर मोर विशेष आतुरता से बोल रहा है और मट्ठा-खट्ठा होने लगे तो समझ लीजिए कि पानी बरसने को बेताब है। इसी प्रकार नन्हीं गोरैया का धरती में गड्ढा खोदते हुए अपने ऊपर मिट्टी उलीचना भी वर्षा का संकेत है।

सृष्टि के शुरूआती दौर में ये वन्य जीव हमारे दोस्त थे। माना हमारी दोस्ती इन्हें यहां तक खींच लाई है हम इन्हें संरक्षण भी दे रहे हैं मगर हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि ये सताने या दोहन करने के लिए नहीं हैं। हमने इनका घर छीना है तो इनके सही पुनर्वास की भी व्यवस्था करनी होगी। वरना हमारे ये दोस्त हमसे बहुत दूर चले जाएंगे।

Unit – 12

रेगिस्तानः पर्यावरण का परिवर्तित स्वरूपः

भौगोलिक और जलवायुविक प्रक्रियाएं पृथ्वी के एक भाग को हरा-भरा बनाती हैं वही रेगिस्तानों को भी जन्म देती हैं। रेगिस्तानों के बनने के एक से एक कारण है। आमतौर पर कोई भी क्षेत्र उस समय मरुस्थल में बदल जाता है जब वहाँ के वायुमंडल में नमी की कमी होने लगती है। वर्षा की कमी और सूर्य की गर्मी, धरती को गरमाने लगती है। रेगिस्तान बनने के अनेक कारणों में से एक कारण है तेज हवा के कारण भूमि का क्षरण होता है। लेकिन सभी रेगिस्तानों के लिए यह नियम लागू नहीं होता। जैसे कि चिली के दक्षिणी मरुस्थलीय भाग में स्थिति बिल्कुल विपरीत है। यहां वर्षा की अधिकता के बाद भी यह क्षेत्र बंजर है जिसका कारण है वर्षा के पानी से उपजाऊ मिट्टी का बह जाना।

मरुस्थल को जन्म देने वाले प्राकृतिक, कारण तो हजारों वर्षों से वही हैं लेकिन अनेक मानवीय क्रियाकलापों ने भी उनके विस्तार में मदद की है। भूमि के बंजर हो जाने का एक कारण है वृक्षों की बेतहाशा कटाई। इसके अतिरिक्त पशुओं द्वारा चरायी, खानों की खुदायी, खेती के तरीकों का सही न होना आदि मरुस्थलों के विस्तार में सहायक सिद्ध हुए।

वर्षा की कमी के अतिरिक्त मरुस्थल गर्मी से पहचाने जाते हैं। वहां नमी की कमी के कारण सूर्य की किरणें वायुमंडल को छेदकर, धरती को गरमा देती हैं। हवा में अगर नम्मी मौजूद हो तो वह सुरक्षा कवच का काम करती है। रेगिस्तान में दिन जितना गर्म होता है रात उतनी ही ठंडी।

रेगिस्तान वहां रहने वालों की बहुत मदद नहीं करता बल्कि वहां रहने वालों को वहां की गर्मी को झेलने की आदत डालनी पड़ती है जैसे कि उत्तरी अमेरिकी मरुस्थल में अनेक रेड इंडियन और मैक्सिको निवासी 'मड हाउस' में रहते हैं। विस्तृत रेगिस्तान से होकर गुजरने वाले विश्व के सबसे बड़े ओएसिसि, नील घाटी के किनारों पर ही इतिहास की सबसे प्रभावशाली सभ्यता का जन्म हुआ था जिसे आज भी मिस्र घाटी की सभ्यता के नाम से जाना जाता है।

रेगिस्तानों में जीवन पाया तो जाता है लेकिन चाहे मनुष्य हो, पेड़-पौधे हों या जीवजन्तु, उन्हें स्वयं को वहां की परिस्थितियों के अनुसार ढालना पड़ता है। यहां केवल वे ही पेड़ जीवित रह सकते हैं जिनकी जड़ें मिट्टी में बहुत गहरायी में होती हैं और जो लंबे समय तक सूखा सहने की क्षमता रहते हैं। मैस्कीट, रेगिस्तान में पाया जाने वाला एक ऐसा ही पेड़ है जिसकी जड़ें जमीन में 11 मीटर गहरी होती हैं। कैक्टस का तना, वर्षा के बाद पानी एकत्रित कर फूल जाता है और जैसे जैसे पानी इस्तेमाल होता जाता है वह सिकुड़ता जाता है। कुछ रेगिस्तानी पौधे, पानी की क्षति में कमी कर जीवित रहते हैं। पानी की अधिकांश क्षति पत्तियों से उत्स्वेदन के कारण होती है इसलिए कुछ वृक्ष तो सूख के समय पत्तियां गिरा देते हैं तो कुछ उन्हें रूपांतरित कर आकार में इतना छोटा कर लेते हैं कि पानी की क्षति कम से कम हो। लेकिन वर्षा के बाद, मरुस्थल भी फूलों और हरी-भरी वनस्पतियों से लहलहा उठता है।

रेगिस्तानों में कीटों से लेकर सरीसर्प, पक्षी और स्तनपायी तक सभी तरह के जीव पाए जाते हैं। वर्षा काल के बाद तो वहां हिरन, लोमड़ी और भेड़ियों को भी घूमते देखा जा सकता है। ऊंट को रेगिस्तान का जहाज माना जाता है। ऊंटों के लिए बिना पानी और खाने के लंबे समय तक रहने में कोई तकलीफ नहीं होता। ऊंट के कूबड़ में काफी मात्रा में वसा संग्रहित होती है। ऊर्जा की आपूर्ति के लिए जब वसा का उपयोग होता है तो पानी भी बनता है। ऊंट कई महीनों तक उस पानी पर गुजारा कर सकता है।

रेगिस्तान की एक और विलक्षण पहचान है वहां पाए जाने वाले रेत के टिब्बे जो तेज हवाओं की देन है। इनकी ऊंचाई 250 मीटर तक देखी गयी। ये तेज हवाओं के कारण अपना आकार और स्थान बदलते रहते हैं। रेगिस्तान में दूर-दूर तक पेड़-पौधों की कमी होने के कारण तेज हवाओं के मार्ग में कोई बाधा भी उत्पन्न नहीं हाती है और वह अपने साथ टनों मिट्टी उड़ा ले जाती है और जहां जाकर हवा के ये बवंडर रुकते हैं वहीं रेत के पहाड़ बन जाते हैं। रेगिस्तानों के विस्तार का एक कारण तेज हवाओं के कारण भूमि का क्षरण भी है।

आज रेगिस्तान वैज्ञानिकों के लिए आकर्षण का प्रमुख केन्द्र बने हुए हैं। उन्हें लगने लगा है कि रेगिस्तानों को भी नयी प्रौद्योगिकियों की सहायता से रहने योग्य बनाया जा सकता है। उसका सर्वोत्तम उदाहरण इजरायल में देखने को मिलता है। जब वहां रेगिस्तान का दानव पैर पसारने लगा तो उन्होंने अन्य देशों से औद्योगिक और आर्थिक सहायता लेकर फिर से नए जंगल लगाए और अपने नेगेव रेगिस्तान को फिर से हरा-भार कर लिया। एमस्टरडम के फूलों के बाजार के लिए गुलाबों से लेकर, यूरोप के लिए संतरे, खुबनी और अनेक सब्जियां आज नेगेव उपलब्ध करा रहा है। इजरायल के अलावा ईरान के उत्तर में, मध्य एशिया मे रूस भी रेगिस्तानी इलाकों को फिर से आबाद करने के प्रयासों में लगा है। चीन में भी टकला माकन और गोबी रेगिस्तानों में रेत के टिब्बो की खुदायी कर पेड़ पौधे लगाने की योजना है।

ग्रेट इन्डियन डेजर्ट के नाम से प्रसिद्ध थार, पश्चिमी भारत और पाकिस्तान में सिंधु नदी के पूर्व में फैला है। राजस्थान विश्व का सबसे घनी आबादी वाला रेगिस्तानी इलाका है। विश्व में कहीं भी इतनी बड़ी संख्या में लोग ऐसी दुरूह परिस्थितियों में जीवन बसर नहीं कर रहे हैं। यहां मरुस्थल के विस्तार को रोकने के लिए और बंजर भूमि को उर्वर बनाने के लिए, केन्द्रीय मरुक्षेत्र अनुसंधान संस्थान, जोधपुर प्रयासरत है।

रेगिस्तानों में खनीजों की विशाल मात्रा मौजूद है। रेगिस्तान में पाए जाने वाले खनिजों में यूरेनियम, वैनाडियम आदि प्रमुख हैं। इनके साथ मिलने वाली अन्य धातुएं हैं चांदी और सीसा। रेगिस्तान का एक और प्रमुख उपहार है तेल जिसे पिघला काला सोना अर्थात् लिक्विड ब्लैक गोल्ड के नाम से भी जाना जाता है जो आधुनिक तकनीकों की जान है। विश्व के अधिकांश तेल स्रोत रेगिस्तानों में ही पाए जाते हैं। रिचन्डल नामक पौधे से गैसोलिन निकाला जा रहा है।

रेगिस्तान भी संसार का एक हिस्सा है, जिनका मनुष्य ने अभी तक समुचित उपयोग नहीं किया है लेकिन वह भी अब उस की जुगुप्सा पूरी नहीं कर सकेगा। जिन देशों में लोग भूखे हैं वहां बेकार और उपेक्षित रेगिस्तानी भूमि को फिर से उपजाऊ बनाने के प्रयास जारी हैं। जाने कब से बेकार पड़ी बंजर भूमि को एक के बाद एक काम में लाया जा रहा है और वह सभी कुछ प्राप्त करने के प्रयास किये जा रहे हैं जो मनुष्य के लिए उपयोगी हैं या जिसकी उसे जरूरत है।

Unit – 13

निम्नलिखित प्रश्नो का उत्तर लिखिए –Weightage 2

प्र) धरती में पानी का भविष्य क्या होगा?

उ) मानव शरीर जिन पांच तत्वों से मिलकर बना है उनमें से एक है जल। अरस्तू के अनुसार समूचे ब्रह्मांड का निर्माण मिट्टी,हवा, अग्नि और जल नामक चार घटकों से हुआ है। जल को जीवन का पर्यायवाची माना जाता है। विश्व के महत्वपूर्ण सभ्यताओं का उदय भी जल से हुआ है। एक समय था जब यह जल हमारे चारों ओर महासागरों, झीलों, नदियों और प्रपातों में प्रचुर मात्रा में मौजूद था लेकिन दुख की बात यह है कि इस अथाह संपदा का इस्तेमाल इस ढंग से किया गया कि इसका सदुपयोग कम और दुरुपयोग ज्यादा हुआ। नतीजा यह हुआ कि अन्य प्राकृतिक संसाधनों की तरह हम आज शुद्ध पेय जल के लिए भी तरसने लगे है। आज जल एक उत्पादन सामग्री बन गया है। बडे-बडे कंपनियाँ पेय जल को बोतलों में भर कर बाज़ार में बेच रहे हैं। पानी की खपत दिन पर दिन बढ़ती जा रही है। आज विश्व की 6 अरब से अधिक आबादी उपयोग करने योग्य कुल जल में से 54 प्रतिशत का उपयोग कर रही है। अनुमान है कि वर्ष 2025 तक यह मात्रा 70 प्रतिशत हो जाएगी। आंकड़े बताते हैं कि प्रति व्यक्ति जल की खपत की वर्तमान दर यदि भविष्य में बनी रही तो अगले 25 वर्षों के दौरान मानव जाति विश्व में कुल उपलब्ध मृदु जल में से 90 प्रतिशत का उपयोग करने लगेगी। इस स्थिति में अन्य जीवों के लिए मात्र 10 प्रतिशत जल ही उपलब्ध होगा। ऐसा माना भी जात है कि भविष्य में पानी के लिए युद्ध की संभावनाएँ है। इस विनाशकारी स्थिति से धरती और मानव राशी को बचाने केलिए हमे बडे ही सतर्कता से जल का उपयोग करना चाहिए।

प्र) 'त्रिकाल' से क्या मतलब है?

उ) राजस्थान के बाड़मेर एवं जैसलमेर तथा जोधपुर जिले के कुछ भागों में तो लोगों को अक्सर सूखे यानी अकाल का प्रकोप झेलना पड़ता है और वहाँ के लोग अब इसे अकाल न कह कर 'त्रिकाल' के नाम से पुकारने लगे हैं। इस त्रिकाल शब्द का प्रयोग उन्होंने तीन वस्तुओं – पानी, चारा एवं अनाज के लिए किया है। पानी नहीं, चारा नहीं और अनाज नहीं - भला कोई कैसे जिये?

प्र) जल संरक्षण कैसे की जाती है?

उ) पृथ्वी पर मनुष्य और अन्य जीवों का जीवन-चक्र केवल जल रूपी ईधन से ही गतिशील रह सकता है। जल हमारी खाद्य व्यवस्था की अत्यंत महत्वपूर्ण इकाई है। जल का संग्रह और संरक्षण दोनों की आवश्यक हैं और इससे भी जरूरी है इस बारे में जागरूकता लाना। जल संरक्षण के प्रति चेतना जागृत करने केलिए अनेक प्रयास जारी हैं। जल संरक्षण का मूल तत्व है वर्षा के जल को संग्रह करके, तथा जल प्रवाह को नियमित करके जल से अधिकतम लाभ प्राप्त करना तथा स्वच्छ जल का निशिचत भंडार बनाए रखना। वर्षा जल का संग्रहण से भूमिगत जल स्तर में वृद्धि होती है।

प्र) मानव प्रगति जीव-जंतुओं पर कैसे प्रभावित है?

उ) यह धरती अनेक जीव-जंतुओं, पेड़-पौधे तथा छोटे-छोटे जीवाणुओं और कीटाणुओं के समन्वयन से बना है। एवल्यूशन तथा सभ्यता की सीढ़ियाँ चढते मनुष्य इन जीव श्रृंखलाओं में सबसे प्रथम और चतुर निकला। अपनी सोच और बुद्धि के सहारे मानव जाती ने पर्यावरण पर अपना कब्ज़ा जाम लिया। उसने एक ओर वृक्षों को अपनी आवश्यकता के अनुसार उपयोग किया तो वहीं जीव जंतुओं को भी अपना साथी बनाया। इनमें कुछ को उसने बतौर सवारी चुना, कुछ को सुरक्षा में लगाया, कुछ को घरेलू बना अपने आहार तथा अन्य मतलब की वस्तुएँ प्राप्ति के लिए रखा तो कुछ जीव ऐसे भी थे जिन्हें सीधे आहार में शामिल किया। नन्हें पक्षी भी उसके साथी बने जिन्हें उसने सौन्दर्य के लिए पाला और आहार के लिए भी। यह सब होते हुए भी मनुष्य का प्रथम लक्ष्य अपनी स्वार्थ लाभ है। मानव प्रगति और विकास ने धरती पर रहने वाले अनेखों जीव-जंतुओं का आवास-व्यवस्था को नष्ट किया। मनुष्य ने जीव- जंतुओं को अपने मनोरंजन तथा संरक्षण के नाम पर अनेकों जीवों कों उनके प्राकृतिक आवास -व्यवस्था से बाहर लाकर शहरों में बने चिडिया घरों में रखा। लुप्त होते प्रजातियों के लिए सरकार ने संरक्षित अभयारण्य बनाया है। किसी किसी प्रजातियों को मारना या शिकार करना कानूनी जुर्म गोशित किया गया। यह सब होते हुए भी जीव जंतुओं का नसल दिन ब दिन नष्ट होता जा रहा है। इस का मुख्य कारण है मानव जाती का यह अंधाधुंध विकास। देश में स्थापित कृत्रिम वन्य प्राणी स्थलों में कुछ वन्य जीव ऐसे भी हैं जो समाप्ति के कगार पर हैं मसलन मणिपुरी हिरण, बब्बर शेर, काला हिरण, साम्बर, मगरमच्छ, गौंडा, बर्फीली तेंदुआ, शेरपूंछ बंदर गैरहा। इन प्रजातियों के संरक्षण के लिए कई परियोजनाएँ तैयार किया गया है जैसे हाथी परियोजना, टाइगर परियोजना आदि। भारत में ही नहीं विश्व स्तर पर ऐसे अनेकों परियोजनाएँ है जिनका निरीक्षण डब्ल्यू.डब्ल्यू. एफ द्वारा किया जा रहा है। यह सब होते हुए भी हम मानव ने धरती के प्राकृतिक संसाधनो पर अपना अधिकार जमा लिया है। जानवरोंऔर पक्षियों के लिए हम कुछ भी नहीं बचा रहे हैं। औद्योगिक क्रान्ती ही नहीं मानव के द्वेश और अहंकार से उत्पन्न युद्ध तथा विनाशकारी परमाणु अस्त्रों के परीक्षण तथा प्रयोग ने पर्यावरण की संतुलित अवस्था को बदल दिया है। इससे अनेकों जव-जंतुओं का विनाश हो चुका है।

प्र) रेगिस्तान में पाए जाने वाले जीव-जंतुओं की विशेषताएँ क्या हैं?

उ) रेगिस्तानों में कीटों से लेकर सरीसर्प, पक्षी और स्तनपायी तक सभी तरह के जीव पाए जाते हैं। वर्षा काल के बाद तो वहाँ हिरन, लोमड़ी और भेड़ियों को भी घूमते देखा जा सकता है। यहां रहने वाले अधिकांश जीव रात में अपने भोजन की तलाश में बाहर निकलते हैं। छोटें-छोटे जीव तो जमीन के नीचे बिल बनाकर रहते हैं और गर्मी में बिल्कुल निष्क्रीय हो जाते हैं। बड़े जीव पानी की कमी को दूर करने के लिए अपने शरीर में पाचन के दौरान बनने वाले पानी का भी प्रयोग कर लेते हैं। पानी का यह स्रोत विशेष रूप से ऊँटों के लिए महत्वपूर्ण होता है जो बिना पानी और खाने के लंबे समय तक रह सकता है। ऊँट के कूबड़ में काफी मात्रा में वसा संग्रहित होती है। ऊर्जा की आपूर्ति के लिए जब वसा का उपयोग होता है तो पानी भी बनता है। ऊँट कई महीनों तक उस पानी पर गुजारा कर सकता है।

प्र) भारत में मरुस्थल के विस्तार को रोकने के लिए और बंजर भूमि को उर्वर बनाने केलिए क्या कदम उठाया गया है।

उ) मरुस्थल के विस्तार को रोकने के लिए और बंजर भूमि को उर्वर बनाने के लिए, केन्द्रीय मरुक्षेत्र अनुसंधान संस्थान, जोधपुर प्रयासरत है। वहाँ के वैज्ञानिकों का कहना है कि तेज हवा के कारण उड़ने वाली रेत हरे-भरे खेतों को अनुपजाऊ और बंजर बना देती है किन्तु रेत के टिब्बों के अंदर जमा नमी का उपयोग कर उन पर वृक्ष उगाए जा सकते हैं। इन वृक्षों में विलायती बबूल, खेजड़ी, कैर और हिंगाटा आदि प्रमुख हैं। वैज्ञानिकों के अनुसार इन वृक्षों से न केवल टिब्बों का स्थिरीकरण होगा बल्कि मिट्टी की भौतिक, रासायनिक और जैविक गुणवत्ता का सुधार होगा। बीकानेर के निकट लगभग 50 प्रतिशत रेत के टिब्बों पर खेती आरंभ हो चुकी है।

प्र) वन्य जीवियों के संरक्षण के लिए क्या-क्या कदम उठाये जा रहे हैं।

उ) मानव के विकास ने इस धरती पर अन्य प्राणियों के जीवन खतरे में पडने लगा। जिन वन्य जीवों की हमने प्राकृतिक गोद छीनी तथा जिनकी संख्या घट रही है उनके संरक्षण के लिए सरकार ने कई योजनाएँ तथा परियोजनाएँ तैयार किए है। गैंडों का संरक्षण काजीरंगा राष्ट्रीय पार्क में किया जा रहा है। घड़ियाल के पुनर्वास के लिए लखनऊ की कुकरैल घड़ियाल पुनर्वास योजना काम कर रही है। इसके अलावा आंध्र प्रदेश और उड़ीसा की सरकारें भी प्रयास कर रही हैं। कुछ समय पहले उत्तर प्रदेश में चंबल महानदी और रामगंगा में बड़ी संख्या में घड़ियालों के बच्चों को छोड़ा गया था। हाथी के संरक्षण के लिए पेरियार हाथी परियोजना, बाघों के संरक्षण के लिए टाइगर परियोजना आदि।

जिन जानवरों का नस्ल बहुत दुर्लभ होते जारे हैं, उनके संरक्षण केलिए सरकार ने कानून पारित किए है। इन जानवरों को विशेष अनुसूची में रखा गया है। इन जानवरों को मारना या पालना कानूनी अपराध करार दिया गया है। काला हिरण, बंगाल बाघ, आदि इस अनुसूची में आते हैं।

प्र) सूखे के कितने प्रकार है?स्पष्ट कीजिए।

उ) सूखा कम वर्षा अथवा किसी एक क्षेत्र विशेष में एक वर्ष या कई वर्ष के लम्बे समय तक पानी की कमी के कारण पड़ता है और इसे मौसमी, जलीय एवं कृषि परिस्थितियों के दृष्टिगत परिभाषित किया जा सकता है। लम्बे समय तक वर्षा की कमी मौसमी सूखे के अन्तर्गत आती है। जलीय सूखा भूजल स्तर में गिरावट, नदियों एवं नालों के सूखने को इंगित करता है जिनके कारण पेयजल, दैनिक उपभोग सिंचाई एवं औद्योगिक उपयोगों के लिए जल उपलब्ध नहीं होता। कृषि सूखा तब माना जाता है जब कम वर्षा या पानी के स्रोतों के सूख जाने के कारण मूल क्षेत्र में नमी बिल्कुल खत्म हो जाती है। मिट्टी सूखकर भुरभुरी हो जाती है और पानी के अभाव में खेती नहीं हो पाती।

Unit – 14

निम्नलिखित प्रश्नो का उत्तर लिखिए –Weightage 4

प्र) प्रवासी पक्षी क्या है?इन प्रवासी पक्षियों की विशेषता संझाइए।

उ) मौसम के बदलते तेवर के साथ ही कुछ पक्षी अपने बचाव के लिए घर छोड़ देते हैं और हजारों मील की लंबी यात्रा तय कर दूर देश जा पहुंचते हैं, जहाँ उनकी सुरक्षा और खान-पान का पूरा इंतजाम किया जाता है। इन पक्षियों को प्रवासी पक्षी कहते हैं। साइबेरियाई सारस एक प्रवासी पक्षी है। ठंडियों में यह सारस साइबेरियाई से उडकर भारत पहूँचती है। और मैसम बदलने पर वापस साइबेरिया जाती है। इन पक्षियों का अध्ययन के लिए अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर वैज्ञानिक काम कर रहे हैं। इन पक्षियों का यात्रा एक रहस्यमय विषय है। इस रहस्य पर दुनिया भर के जीव वैज्ञानिक शोध और परीक्षण में लगे हैं। ये बंजारे पक्षी अपनी यात्रा रात में ही तय करते हैं। रात में यह सात हजार फुट ऊँचाई तक पंख फैलाते देखा गया है। ये पक्षी दिन में जमकर भोजन करते हैं और फिर इस इकट्ठे ईंधन के सहारे रात में यात्रा करते हैं। रात में कही भी आसानी से भोजन मिल नहीं पाता तो उड़ते रहते हैं। पौ फटते ही वे धरती पर उतरते हैं। दिन में उतरने के समय कई बार मुसीबत पैदा हो जाती है। कई बार सामने दूर तक फैला रेगिस्तान या फिर हिलोरें लेता मासागर आ जाता है और पड़ाव डल नहीं पाता। ऐसे में पक्षियों को न आराम मिलता है और न खाने केलिए भोजन। तब मजबूरन दिन में उड़ते रहना पड़ता है। प्रवासी पक्षियों की रात में यात्रा तय करने की आदत को लेकर कुछ पक्षी विशेषज्ञों का अनुमान था कि वे तारों के सहार अपनी यात्रा तय करते हैं। कुछ का कहना है कि पक्षियों को राह दिखाने में पृथ्वी के चुंबकत्व की विशेष भूमिका रहती है।

प्रवासी पक्षियों की रहस्यमय गुत्थी सुलझाने केलिए उन्हें चिन्हित करने का रोचक तरीका सामने आया है। इससे पता चलता है कि आमतैर पर कितना पक्षी सकुशल घर पहुंच गए। इसके लिए पक्षियों के पैरों में धातु के छल्ले पहना दिए जाते हैं। हर छल्ले पर एक संख्या दे दी जाती है और उसे रजिस्टर में दर्ज कर लिया जाता है। यह तरीका विश्व भर के प्रवासी पक्षियों पर किए जा रहे अनुसंधान के लिए अपनाया जा रहा है। वापस आए पक्षियों के स्वास्थ्स के अध्ययन के अनुसार पक्षी जब अपनी यात्रा पर गए थे तो उनका वजन 10 से 13 ग्राम था और जब यह तीन महीने बाद वापस आए तो वजन 20 ग्राम था।

दिल्ली से 200 किलोमीटर दूर भरतपुर का 'घाना राष्ट्रीय पार्क'इन प्रवासी पक्षियों का स्वर्ग है। घाना राष्ट्रीय पार्क की शोभा है मेहमान साइबेरियाई सारस। छठे दशक के 200 शुरू से लेकर अंत तक और फिर सातवें दशक में भी देश में हर वर्ष 200 के लगभग और कभी इससे भी ज्यादा साइबेरियाई सारस यहाँ आते रहे। लेकिन आगे चलकर इनकी संख्या कम होने लगे। वर्ष 2002 और 2003 के प्रारंभ तक भी प्रवासी पक्षियों की संख्या कम रही।

साइबेरियाई सारसों के कुछ वर्ष न आ पाने के पीछे पर्यावरण की बिगड़ती हालत भी जिम्मेदार है। प्रदूषण ने इन जीवों को भी प्रभावित किया है। वैज्ञानिक परीक्षण बताते हैं कि जिस रास्ते से ये सारस गुजरते हैं वहाँ पिछले दिनों खासा हंगामा रहा। इस पूरे दशक में अफगानिस्तान, ईरान और ताजा तरीन ईराक-अमरीका युद्व की विभीषिका ने इन सारसों की संख्या भारी तादाद में घटाई है। ये देश उनके रास्ते में आते हैं। इंसान की आपसी लड़ाई से अनभिज्ञ ये नन्हे स्वच्छंद मेहमान अपनी ही जान गवां बैठे हैं।

Unit – 15

पर्यावरण संरक्षण के लिए सामाजिक वानिकीः

भारत में वनों का तेजी से ह्रास हो रहा है। इसके अनेक कारण हैं। जिनमें से प्रमुख हैं : लकड़ी के लिए वृक्षों की अंधाधुंध कटाई, खेती के लिए वनों की कटाई और जानवरों द्वारा चराई आदि। हालांकि पिछले कुछ समय से वनों की दशा सुधारने के लिए कुछ काम किए गए हैं जैसे कि व्यर्थ खाली पड़ी भूमि पर मिश्रित वृक्षारोपण, अपक्षीणित हो गयी वन मृदा का जीर्णोद्धार और ग्रामीणों के लिए ईंधन के कुछ अन्य विकल्प ढूंढना।

वनों की सुरक्षा के लिए आजकल सामाजिक वानिकी की संकल्पना को भी आजमाया जा रहा है। वनों के निकट के क्षेत्रों में स्थित समाज तक वानिकी के लाभ पहुंचाना ही सामाजिक वानिकी है। ग्रामीण और शहरी समुदायों के लाभ के लिए पारम्परिक वन क्षेत्रों के बाहर वानिकी क्रियाएं, सामाजिक वानिकी के अन्तर्गत आती हैं। सामाजिक वानिकी के मुख्य घटक हैंः कृषि वानिकी, ग्रामीण और विस्तार वानिकी एवं शहरी वानिकी। सामाजिक वानिकी को त्वरित गति देने और बढ़ावा देने के उद्देश्य से सरकारी और गैर सरकारी संगठनों की ओर से अनेक परियोजनाएं चलायी गयी हैं जिनके वांछित परिणाम भी सामने आए हैं। इनमें से कुछ प्रमुख परियोजनाएं इस प्रकार हैं-

1. व्यर्थ भूमि की पहचान और वर्गीकरण
2. स्वैच्छिक संस्थाओं के लिए ग्रान्ट्स-इन-एड
3. विकेन्द्रित नर्सरी कार्यक्रम
4. ग्रामीण ईंधन काष्ठ रोपण योजना
5. ऑपरेशन 'सॉयल वाच'
6. आर्थिक सहायता योजना
7. वन-चरागाह योजना
8. सहकारी समिति प्रोत्साहन योजना

सामाजिक वानिकी कार्यक्रम का उद्देश्य न केवल नष्ट हो गए प्राकृतिक वनों को पुनर्जीवन देना है बल्कि व्यर्थ पड़ी भूमि पर वृक्षारोपण कर पर्यावरण संरक्षण में वनों की भागीदारी को बढ़ाना है। सामाजिक वानिकी से ईंदन, चारा, लकड़ी और अन्य अनेक उत्पादों की कमी को पूरा किया जा सकता है लेकिन सामाजिक वानिकी की सबसे बड़ी कमी यह है कि इससे अधिकतर बड़े किसानों को लाभ होता है और निचला तबका यूं ही रह जाता है। सामाजिक वारिकी कार्यक्रम को आम आदमी का काय्रक्रम बनाकर मानव और पर्यावरण दोनों का हित करना होगा।

Unit – 16

जैवप्रौद्योगिकी और पर्यावरणः

दिनोदिन बढ़ती आबादी की मूलभूत जरूरतों को पूरा करने के लिए लगातार प्रकृति का दोहन किया जा रहा है। जहां एक ओर भूमि के अत्यधिक दोहन से मिट्टी की उर्वरा शक्ति क्षीण पड़ती जा रही है वहीं फसलों की सिंचाई के लिए अच्छा पानी मिलना दूभर हो गया है। हरियाली का तेजी से होता सफाया और बदलता पर्यावरण प्राकृतिक प्रकोपों को उपजा रहा है जिसके कारण मौसमों का भी संतुलन गड़बड़ा गया है। इस गड़बड़ी में हम कैसे गुज़ारा करेंगे। आज इस यक्ष प्रश्न का उत्तर खोजने के लिए वैज्ञानिक जैवप्रौद्योगिकी का सहारा ले रहे हैं।

प्रकृति जो काम लाखों वर्षों में कर पाती थी आनुवंशिक अभियांत्रिकी अर्थात् जेनेटिक इंजीनियरी के चलते अब पलक झपकते ही किया जा सकता है। कुछ बदलते पर्यावरण के कारण और कुछ बढ़ती जनसंख्या के कारण 'हरित क्रांति' के बावजूद बढ़ती जनसंख्या के भरण-पोषण के लिए कृषि में नयी क्रांति लाने की आवश्यकता महसूस की जा रही थी जिसे पूरा किया है जैवप्रौद्योगिकी ने। जेनेटिकली मॉडीफाइड(जी एम) फूड या जीन संवर्धित खाद्य पदार्थ और फसलें जैवप्रौद्योगिकी की ऐसी ही देन हैं जिनके सही और गलत इस्तेमाल और प्रभाव को लेकर बहस जारी है।

फसलों में विषाणुजन्य रोगों की रोकथाम के लिए आनुवंशिक अभियांत्रिकी का प्रयोग किया जा रहा है। सन् 1986 में टी एम वी यानी दोबैको मोजैक वाइरस के आवरण प्रोटीन को नष्ट करने वाला जीन प्रविष्ट कराया गया। अब तक 35 विभिन्न प्रकार के विषाणुओं के खिलाफ यह तकनीक आजमाई जा चुकी है। कुछ फसलों में यह क्षमता होती है कि वे अजैविक दबाव पड़ने पर प्राकृतिक रूप से कुछ प्रोटीन पैदा करती हैं जैसे कि एल, ई, ए प्रोटीन , आर, ए बी प्रोटीन, डिहाइड्रिन, एच एस प्रोटीन, ऑस्मोटिन और एनेक्सिन इत्यादि। ये प्रोटीन बनाने वाले जीन आलू, टमाटर और धान में डाले गए। भारत में धान और सरसों की सूखारोधी किस्में पूसा इंस्टीट्यूट और दिल्ली विश्वविद्यालय में तैयार की गयी हैं।

फसलों का उत्पादन बढ़ाने के साथ-साथ वैज्ञानिकों का ध्यान इनकी पौष्टिकता बढ़ाने की ओर भी है। उन्होंने अनेक ऐसी पराजीनी फसलें तैयार की हैं जो गुणवत्ता और पौष्टिकता की दृष्टि से श्रेष्ठ हैं। उदाहरण के लिए उन्होंने सरसों में ऐसा जीन प्रविष्ट कराया जिससे कम वसा अम्ल वाली सरसों का उत्पादन हुआ जो हृदय रोगियों केलिए सर्वोत्तम है।

आने वाले समय में रोगों के इलाज के लिए भी पराजीनी फसलों का प्रयोग किया जाएगा। वैज्ञानिकों ने तंबाकू के पौधे में सक्रिय एंटीबॉडी बनाए हैं जो हमारे शरीर को रोगों से लड़ने की क्षमता प्रदान करते हैं। इसकी सफलता से प्रेरित होकर वैक्सीन पैदा करने के लिए पौधों को बायोरिएक्टर के रूप में इस्तेमाल करने के प्रयोगों में भी सफलता मिली है। इसीलिए अब हिपेटाइटिस बी का टीका तंबाकू में बन रहा है तो हैजे का टीका केले में बनेगा। टीके की जरूरत ही नहीं बस केला खाओ।

पर्यावरण में हर वस्तु की अहमियत होती है। बैक्टीरिया , इनके महत्व को बहुत कम लोग समझते हैं और इन्हें केवल रोगों के कारक के तौर पर ही जाना जाता है। इसका एक कारण यह है कि चूंकि बैक्टीरिया दिखाई नहीं देते इसलिए वे क्या कर रहे हैं यह पता करना कठिन है। बैक्टीरिया मनुष्य या पर्यावरण को लाभ पहुंचाने के लिए कुछ नहीं करते बल्कि अपना भोजन प्राप्त करने के क्रम में बहुत सारे विषाक्त पदार्थों को विखंडित करते है और उन्हें ऐसे पदार्थों में परिवर्तित कर देते हैं जो विषाक्त नहीं होते या पर्यावरण पर अपेक्षाकृत कम विपरीत प्रभाव डालते हैं। वैज्ञानिकों ने पर्यावरण को उपयोगी बैक्टीरियाओं का निर्माण किया है। इनके द्वारा पर्यावरण में होने वाले विनाशकारी प्रदूषनों को रोका जा सकता है।

जैव प्रौद्योगिकी के द्वारा मृदा संरक्षण भी किया जा रहा है। मृदा की सफाई की या नव्वीनतम प्रौद्योगिकी फाइटोरेमेडियेशन कहलाती है। धातुओं को काफी मात्रा में संचित कर सकने में सक्षम पौधों में ऐसे जीन होते हैं, जो जड़ों द्वारा मिट्टी से अवशोषित धातुओं की मात्रा का नियमन करते हैं और उन्हें पौधों के अन्य भागों में जमा कर देते हैं। एलीसम लोस्बियेकम के पौधे निकिल धातु का भक्षण करते हैं। ये पौधे विषैली धातु की काफी बड़ी मात्रा को अवशोषित कर अपने हरे ऊतकों में पहुंचाते हैं। वर्षों से वैज्ञानिक ऐसे पौधों की खोज में थे जो प्रदूषित भूमि को निर्विष कर सकें। कैनफ और कैनोला के पाधे मिट्टी नहीं सिलिनियम युक्त जल की भी सफाई करने में सक्षम होते हैं।

अब वन और बगीचों की बिगडी स्थिति सुधारने के लिए वैज्ञानिक जैवप्रौद्योगिकी का सहारा ले रहे हैं। आज देश भर में आनुवंशिक रूप से अभियांत्रिक वृक्षों के रोपण की अनेक परियोजनाएं चलायी जा रही है। वृक्ष हमें प्राकृतिक पर्यावरण प्रदान करते हैं और संकटग्रस्त प्राणियों को आवास प्रदान करते हैं। वैज्ञानिकों का कहना है कि जैवप्रौद्योगिकी की सहयाता से विश्व स्तर पर पर वनआपरोपण और औद्योगिक प्रदूषाण को तो रोका ही जा सकेगा साथ ही काष्ठ और कागज की बढ़ती मांग को भी पूरा किया जा सकेगा। कुछ अनुसंधानकर्ता विषाणुओं और जीवाणुओं के आनुवंशिक पदार्थ को वृक्षों में संरोपित करने के प्रयास कर रहे हैं जिससे वृक्षों की वृद्धि की दर को बढ़ाया जा सके।

Unit – 17

पर्यावरण संरक्षण के लिए नवीन प्रौद्योगिकियाँः

नवीन प्रौद्योगिकी का उपयोग केवल मानव प्रगति के लिए ही नहीं वरण इसका उपयोग पर्यावरण संरक्षण के लिए भी किया जाता है। बीसवी शताब्दी में प्रौद्योगिकी में हुए सबसे क्रान्तिकारी निर्माण कंप्यूटर का था। कंप्यूटर का इस्तेमाल पर्यावरण संरक्षण के लिए भी किया जा रहा है। स्कॉटलैंड के 'द एडिनबरा पैरालेल कंप्यूटिंग सेंटर' ने उच्च क्षमता वाले कंप्यूटरों से रोजमर्रा की और आसपास की समस्याओं का अध्ययन अनुसंधान का काम लिया जा रहा , जैसे मौसम, पानी और प्रकृति। पर्यावरण की समस्याओं को जैव आधार पर सुलझाने के लिए एक नया सॉफ्टवेयर निकाला गया है। यह सॉफ्टवेयर खासतौर से पेट्रोल बिखर जाने की दुर्घटना में बॉयोरेडिएशन की प्रक्रिया को प्रेरित भी करता है और उसका विश्लेषण भी कर सकता है। अब पूरी दुनिया में पेट्रोल फैल जाने पर उससे निपटने का यही तरीका अधिक प्रचलित हो गया है।

कंप्यूटर के लिए ऐसा सॉफ्टवेयर बनाया गया है, जिसमें वन-प्रबंधन की किसी भी योजना के वित्तीय और पर्यावरण संबंधी परिणाम आंके जा सकेंगे और विविध योजनाओं के प्रभाव क्या पड़ेंगे, इसकी तुलना की जा सकेगी। वन प्रबंधन के लिए बने इस अत्यंत उपयोगी सॉफ्टवेयर 'सिमफोर' की मदद से यह जांचा जा सकता है कि सरकारी नीतियों का वन-प्रबंधन पर क्या असर पड़ेगा। यह कार्यक्रम यह भी बताता है कि कटाई के बाद उजड़े जंगल फिर से हरे-भरे कैसे किये जा सकते हैं। इस नयी कंप्यूटर प्रणाली के उपयोग से अब ऐसा तरीका हाथ लगा गया है कि जंगल बचा रहे और इससे आर्थिक लाभ भी लिया जा सके। इससे वन समस्या का संरक्षण और संवर्धन भी होगा, वनवासियों की जीविका भी चलती रहेगी, स्थानीय अर्थव्यवस्था में सुधार होगा और वह स्थायी रूप से आमदनी देती रहेगी तथा रोजगार के अवसर भी बढ़ेंगी।

प्रदूषण के अनेक रूप हैं। इनमें से कुछ रासायनिक प्रदूषण इतने विकट हैं कि आप हाथ से छू भी नहीं सकते। उसी तरह रेडियोधर्मी छीजन है जिसको हटाना और ठिकाने लगाना बड़ा टेढ़ा काम है। अब वैज्ञानिकों ने एक ऐसा पदार्थ बना लिया है जो प्रदूषण को चूसकर खींच लेगा और जहां आप चाहेंगे, वहां उसे छोड़ देगा। वैज्ञानिक जिओलाइट से ऐसा आणविक स्पंज बना रही है जो पानी में से तरह-तरह के रासायनिक पदार्थ चूस लेगा। इससे रासायनिक प्रदूषण की समस्या से निपटने में आसान होगा।

पर्यावरण प्रदूषण के कारण पृथ्वी का बहुत बड़ा हिस्सा मरुस्थल में बदलता जा रहा है। विश्व में बढ़ते जा रहे औद्योगिकीकरण तथा तेजी से हो रही वन कटाई के कारण कई हरे-भरे स्थान रेगिस्तान बनते जा रहे हैं। मौसम वैज्ञानिकों का कहना है कि अगर स्थिति यही रही तो सारी पृथ्वी मरुस्थल में बदल जायेगी। इसके लिए आवश्यकता है कुछ ऐसा लाभकारी करने की जिससे पेड़ों की संख्या में कभी कमी न आये। इसी के मद्देनजर स्पेनी वैज्ञानिक एन्टोनियो इबानेज अल्बा ने एक ऐसा कृत्रिम पेड़ विकसित किया है जिसे उचित संख्या में यदि प्राकृतिक पेड़ों के नजदीक मरुस्थलों में लगाया जाये तो दस वर्षों में सारा मरुस्थल हरा-भरा हो जायेगा।

प्राकृतिक पेड़ों की तरह ही यह कृत्रिम पेड़ तीन भागों में विभक्त हैं। जड़, तना और पत्ते। इसका कड़ा पाइपनुमा तथा पॉलीयूरीथीन से भरा रहता है और इसमें अनेक पाइपनुमा शाखाएं होती हैं जो पानी को सोखने का काम करती हैं। तनों में पॉलीयूरीथीन की विभिन्न घनत्वों वाली अनेक सतहें हैं जो इस तरह डिजाइन की गई हैं कि पानी को एकत्र कर सके और दिन में धीरे-धीरे इसे छोड़ सकें। वैज्ञानिक अल्बा का मानना है कि उनके द्वारा बनाया गया कृत्रिम पेड़ समुचित रेगिस्तानी क्षेत्रों के तापक्रम में काफी बदलाव ला सकेगा। रेगिस्तान में हरियाली लाने में सहायक होगा। इस तरह मानव द्वारा घायल पृथ्वी को वह अपनी नवीन प्रौद्योगिकियों के ज़रिए संरक्षण दिला रहे हैं।

Unit – 18

निम्नलिखित प्रश्नो का उत्तर लिखिए –Weightage 2

प्र) सामाजिक वानिकी के मुख्य उद्देश्य क्या-क्या हैं?

उ) भारत में वनों का तेजी से ह्रास हो रहा है। इसका प्रमुख कारण हैंः लकड़ी के लिए वृक्षों की अंधाधुंध कटाई, खेती के लिए वनों की कटाई और जानवरों द्वारा चराई आदि। वनों की सुरक्षा के लिए आजकल सामाजिक वानिकी की संकल्पना को भी आजमाया जा रहा है। वनों के निकट के क्षेत्रों में स्थित समाज तक वानिकी के लाभ पहुंचाना ही सामाजिक वानिकी है। ग्रामीण और शहरी समुदायों के लाभ के लिए पारम्परिक वन क्षेत्रों की बाहर वानिकी क्रियाएं, सामाजिक वानिकी के अन्तर्गत आती हैं। सामाजिक वानिकी के मुख्य उद्देश्य कुछ इस प्रकार हैंः

(1) ईंधन, लकड़ी, बांस, चारा और अन्य छोटे-मोटे वन उत्पादों की जरूरत को पूरा करने के लिए, उन्हें संपोषणीय आधार पर उपलब्ध कराना।
(2) कृषि उत्पाद बढ़ाने के लिए गोबर का खाद के रूप में उपयोग करना।
(3) ग्रामीणों के लिए रोजगार के अवसर जुटाना।
(4) ग्रामीण क्षेत्रों के कुटीर उद्योगों का विकास करना।
(5) उत्पादन क्षमता के अनुसार उपलब्ध भूमि का उपयोग करना।
(6) मृदा और जल संरक्षण प्रदान करना।
(7) समाकलित ग्रामीण विकास कार्यक्रम के अन्तर्गत ग्रामीण क्षेत्रों का सर्वांगीण विकास करना।
(8) जल और मृदा अपरदन को रोककर खेती के लिए उपयुक्त पारिस्थितिक तंत्र की सुरक्षा करना।

प्र) सामाजिक वानिकी के मुक्ष्य घटक क्या-क्या हैं?

उ) सामाजिक वानिकी के मुख्य घटक हैंः कृषि वानिकी, ग्रामीण और विस्तार वानिकी एवं शहरी वानिकी।

कृषि वानिकी – कषि वानिकी, सामाजिक वानिकी का सबसे सरल रूप है। कृषि वानिकी ऐसी क्रिया है जो खेतों या गांवों में अन्न कृषि क्रियाओं के साथ ही समाकलित होती है। खेतों की मेड़ों पर वायु अवरोध बनाने के उद्देश्य से या मृदा अपरदन रोकने के लिए वृक्षों की एक या दो कतार लगायी जाती हैं। इस प्रकार इनसे जहाँ एक ओर खेती की सुरक्षा होती है वहीं पर्यावरण के सुधार में भी सहायता मिलती है।

विस्तार वानिकी – विस्तार वानिकी के अन्तर्गत ऐसे क्षेत्रों में वृक्ष उगाने के प्रयास किए जाते हैं जो प्राकृतिक वन प्रदेशों से दूर होते हैं और जहाँ किसी अन्य प्रकार की वनस्पति तथा वृक्षों का अभाव होता है जिससे हरीतिमा को दूर तक फैलाया जा सके। विस्तार वानिकी के विभिन्न रूप हैं – मिश्रित वानिकी, परिरक्षण कटिबंध, नष्ट हो रहे वनों में वृक्षारोपण और मनोरंजन के लिए वनरोपण आदि।

प्र) जेनेटिकली मॉडीफाइड (जी एम) फूड क्या है?

उ) कुछ बदलते पर्यावरण के कारण और कुछ बढ़ती जनसंख्या के कारण 'हरित क्रांति' के बावजूद बढ़ती जनसंख्या के भरण-पोषण के लिए कृषि में नयी क्रांति लाने की आवश्यकता महसूस की जा रही थी जिसे पूरा किया है जैवप्रौद्योगिकी ने। जेनेटिकली मॉडीफाइड (जी एम) फूड या जीन संवर्धित खाद्य पदार्थ और फसलें जैवप्रौद्योगिकी की ऐसी ही देन हैं जिनके सही और गलत इस्तेमाल और प्रभाव को लेकर बहस जारी है। फसलों के अत्यधिक उत्पादन से लेकर उसकी गुणवत्ता सुधारने, उन्हें कीट प्रतिरोधी बनाने और प्रतिकूल परिस्थितियों में भी बढ़ सकने की क्षमता उत्पन्न करने में जी एम तकनीक सहायक है। यह तकनीक फसलों की जैविक अपंगता दूर करने में भी कारगर सिद्ध हुयी है। डी एन ए प्रौद्योगिकी ने फसलों में आनुवंशिक सुधार को सरल बनाया है। आनुवंशिक हेराफेरी करके किसी भी फसल को पूर्णतया भिन्न बनाना और उसे कीटों के हमले से बचाना संभव है। जी एक फसलों को जरूरतों के हिसाब से भी ढाला जा सकता है यानी उसमें प्रोटीन, वसा या अन्य पोषक तत्वों की मात्रा सुनिश्चित करना संभव है। बढ़ती आबादी का पेट भरना तो संकर या जी एम फसलों का उद्देश्य है ही, इनका सबसे बड़ा लाभ यह है कि इन्हें पूरी तरह कृत्रिम वातावरण में उगाया जा सकता है।

प्र) बीटी फसल से क्या तात्पर्य है?

उ) बी टी अर्थात् बेसीलस थूरिन्जिएन्सिस नामक यह जीवाणु मिट्टी में पाया जाता है। इसके अनेक विभेद पाए जाते हैं जो अलग-अलग किस्म के टॉक्सिन पैदा करते हैं। ये टॉक्सिन कीटों की आंतों में जाकर उन्हें क्षतिग्रस्त कर देते हैं और कीट पौधों को नहीं खा पाता और भूखों मर जाता है। इन टॉक्सिन वाली जीनों को फसलों में डालकर उन्हें कीटरोधी बनाया जा सकता है। सबसे पहले बीटी खोज 1902 में की गई थी और अब तक बीटी के विभिन्न विभेदों में 80 से अधिक टॉक्सिन पैदा करने वाले 'सी आर वाइ' जीन खोजे जा चुके हैं। इन जीनों के आधार पर 30 से अधिक व्यापरिक फसलों की पराजीनी कीटरोधी किस्में विकसित की जा चुकी हैं। इनमें कपास के बाद मक्का और आलू एवं अब धान भी शामिल हो गया है।

प्र) पर्यावरण के संरक्षण में बैक्टीरिया के योगदान संझाइए ।

उ) बैक्टीरिया की संख्या पृथ्वी पर अन्य सभी जीव-जंतुओं की कुल संख्या से कई गुना अधिक है। अनेक बैक्टीरिया पर्यावरण संरक्षण में महत्वपूर्ण योगदान देते हैं। पर, इनके महत्व को बहुत कम लोग समझते हैं और इन्हें केवल रोगों के कारक के तौर पर ही जाना जाता है। इसका एक कारण यह है कि चूंकि बैक्टीरिया दिखाई नहीं देते इसलिए वे क्या कर रहे हैं यह पता करना कठिन है। बैक्टीरिया मनुष्य या पर्यावरण को लाभ पहुंचाने के लिए कुछ नहीं करते बल्कि अपना भोजन प्राप्त करने के क्रम में बहुत सारे विषाक्त पदार्थों को विखंडित करते हैं और उन्हें ऐसे पदार्थों में परिवर्तित कर देते हैं जो विषाक्त नहीं होते या पर्यावरण पर अपेक्षाकृत कम विपरीत प्रभाव डालते हैं। कुछ बैक्टीरिया अपनी सामान्य गतिविधियों के दौरान अनेक महत्वपूर्ण और उपयोगी पदार्थों का निर्माण कर डालते हैं। अपने इन्हीं गुणों के कारण बैक्टीरिया की मदद बहुत असामान्य प्रक्रियाओं में भी ली जा रही है। आस्ट्रेलिया में सड़क को टूटने से बचाने के लिए 'रोड टेक

– 2000' नामक उत्पाद का उपयोग किया जा रहा है जो बैक्टीरिया आधारित रसायन है। ओहियो यूनिवर्सिटी के पर्यावरण सूक्ष्मविज्ञानी डॉ. पीटर कोशिगानो ने थाऊरा एरोमेटिका टी-1 नामक ऐसे बैक्टीरिया को खोज निकाला है जो आक्सीजन की कमी के समय भी टालुइन को विखंडित कर डालता है। इलियोनिस यूनिवर्सिटी के वैज्ञानिक डॉ. जान कोट्स ने ऐसे बैक्टीरिया की खोज की है जो आक्सीजन की कम वाले क्षेत्रों में पेट्रोलियम पदार्थों को विखंडित कर ऐसे पदार्थों में बदल देता है जो पर्यावरण पर बुरा प्रभाव नहीं डालते। डाइनोकॉकस रेडियोड्यूरस नामक बैक्टीरिया परमाणु आयुध उपकरणों के दौरान उत्सर्जित घातक मरकरी युक्त पदार्थों को विखंडित करने की दक्षता रखते हैं। अमेरिकी वैज्ञानिकों का मत है कि इन भंडारण क्षेत्रों की सफाई का काम केवल डाइनोकॉकस की मदद से किया जा सकता है। इस तरह किटानू या बैक्टीरिया जिसे विज्ञापनों ने मनुष्य और पर्यावरण का दुशमन बनाया है वहीं बैक्टीरिया मनुष्य और पर्यावरण संरक्षक है।

प्र) जिओलाइट क्या है?

उ) जिओलाइट असल में एक त्रिआयामी संरचना वाला ठोस पदार्थ होता है, जो एल्युमिनियम, सिलिकन तथा ऑक्सीजन का बना होता है। इसमें स्पंज की तरह ही बारीक छेद होते हैं। वैज्ञानिकों ने ऐसे अनेक पदार्थ खोजे हैं जो दबाव पड़ने पर ठोस पदार्थ की तरह टूटर बिखर ही नहीं जाते, बल्कि और भी फैल जाते हैं। जिओलाइट का यही गुण उन्हें प्रदूषण की समस्या से निपटने में इस्तेमाल के लायक बना रहा है। पानी में से रासायनिक प्रदूषकों को हटाने केलिए इसका उपयोग किया जाता है।

Unit – 19

निम्नलिखित प्रश्नो का उत्तर लिखिए –Weightage 4

प्र) विस्तार वानिकी से क्या तात्पर्य है?

उ) विस्तार वानिकी के अन्तर्गत ऐसे क्षेत्रों में वृक्ष उगाने के प्रयास किए जाते हैं जो प्राकृतिक वन प्रदेशों से दूर होते हैं और जहां किसी अन्य प्रकार की वनस्पनि तथा वृक्षों का अभाव होता है जिससे हरीतिमा को दूर तक फैलाया जा सके। विस्तार वानिकी का मुख्य उद्देश्य ग्रामीणों की जरूरतों को पूरा करना। विस्तार वानिकी के अन्तर्गत भूमि सामुदायिक होती है इसलिए इसकी सुरक्षा एवं प्रबंधन की ज्यादा जरूरत पड़ती है। विस्तार वानिकी के विभिन्न रूप हैं- मिश्रित वानिकी, परिरक्षण कटिबंध, नष्ट हो रहे वनों में वृक्षारोपण और मनोरंजन के लिए वनरोपण आदि।

गांवों में पंचायत की भूमि, उपयुक्त जलाशयों आदि की भूमि पर चारा घास उगाने केलिए फलों के पेड़, ईधन काष्ठ देने वाने वृक्षों की मिश्रित वानिकी की जाती है। भारत में शुष्क क्षेत्रों में मृदा अपरदन या बालू का उड़ना एक आम समस्या है। इस उड़ती हुयी बालू को उर्वर खेतों, राजमर्गों, रेलवे लाइन और नहरों आदि में जाने से रोकने के लिए परिरक्षण कटिबंधों की जरूरत होती है। तेज हवाओं को रोकने के लिए वृक्षों और झाड़ियों के रूप में ये कटिबंध लगाए जाते हैं। वायु की दिशा के समकोणिक लगाए गए वृक्ष, झाड़ियाँ या घास वायु प्रवाह को मोड़कर, वायु के वेग को कम कर देते हैं और तीव्र वायु वेग के कारण फसलों आदि को पहुँचने वाले नुकसान को कम कर देते हैं। वृक्षों की कतारें भी वायु के वेग का रुख मोड़ने में सहायक होती हैं। इसी प्रकार वृक्षों के मोटे तने, शाखाएँ और सघन पत्तियाँ भी वायु वेग को रोकने में सहायक होते हैं।

वनों की दशा सुधारने तथा हरियाली बढ़ाने केलिए नष्ट हो रहे वनों में वृक्षारोपण भी किया जाता है। एक ओर जहां वनों को विनाश से बचाकर पर्यावरण संरक्षण के उद्देश्य से तो वनरोपण किया ही जाता है वहीं पर्यटकों को आकर्षित करने के लिए सुन्दर दृश्यावलीयुक्त वनों का विकास किसा जा रहा है। इस स्कीम के अन्तर्गत लोगों के द्वार तक हरियाली लाने और स्थानीय पर्यावरण को कलात्मक बनाने के लिए शहरों के निकट सड़कों के किनारे या नहरों के पार्श्व आदि में विभिन्न मौसमों में फल और फल देने वाले वृक्ष लगाए जाते हैं।

प्र) पर्यावरण संरक्षण के लिए नवीन प्रौद्योगिकियाँ का उपयोग कहाँ तक संभव है।

उ) नवीन प्रौद्योगिकी ने मनुष्य को विकास की सीडियों पर चडा दिया और पर्यावरण को विनाश की ओर मोड दिया। लेकिन मनुष्य ऐसी प्रौद्योगिकियाँ विकसित करने के प्रयास किए जा रहे हैं जो पर्यावरण के पूर्वानुमान और संरक्षण के साथ-साथ धरती के मिजाज को भी जानने में मदद करेंगी। विश्व में ऐसे अनेकों कंप्यूटरों का निर्माण किया है जिससे पर्यावरण में होने वाली विनाश को तुरन्त पहचाना जा सकता है। वैज्ञानिकों ने अंतरिक्ष में पर्यावरण संरक्षण के लिए उपग्रहों को भेजा है जिससे वनों का घटना, तूफान का उठना, सुनामी,

अंतरिक्ष में होने वाली वायू प्रधूषण आदि का पूर्व सूचना तथा संकेत प्राप्त किया जा सकता है। समुद्र या जल स्रोतसों में पेट्रोल बिखर जाने से जल तथा वहीं के जीव जंतुओं का प्रधूषण होता है इस अवस्था से मुक्ति के लिए सॉफ्टवेयर का निर्माण किया है जिससे पेट्रोल बिखर जाने की दुर्घटना में बॉयोरेडिएशन की प्रक्रिया को प्रेरित भी करता है और उसका विश्लेषण भी कर सकता है। इस तरह यह उसे प्रत्यक्ष कर देता है और फिर उसका पूर्वानुमान भी लगाया जा सकता है। फैले हुए पेट्रोल को नष्ट करने केलिए जीवाणु (बैक्टीरिया) की मदद ली जाती है।

कंप्यूटर के लिए ऐसा सॉफ्टवेयर बनाया गया है, जिसमें वन-प्रबंधन की किसी भी योजना के वित्तीय और पर्यावरण संबंधी परिणाम आंके जा सकेंगे और विविध योजनाओं के प्रभाव क्या पड़ेंगे, इसकी तुलना की जा सकेगी। वन प्रबंधन के लिए बने अत्यंत उपयोगी सॉफ्टवेयर 'सिमफोर' की मदद से यह जांचा जा सकता है कि सरकारी नीतियों का वन-प्रबंधन पर क्या असर पड़ेगा। इस नयी कंप्यूटर-प्रणाली के उपयोग से अब जंगल बचा रहे है और आर्थिक लाभ भी लिया जा रहा है। इससे वन समस्या का संरक्षण और संवर्धन भी होगा, वनवासियों की जीविका भी चलती रहेगी, स्थानीय अर्थव्यवस्था में सुधार होगा और वह स्थायी रूप से आमदनी देती रहेगी तथा रोजगार के अवसर भी बढ़ेंगे।

प्रदूषण का आणविक उपचार नवीन प्रौद्योगिकी का महत्वपूर्ण उपलब्धी है। प्रदूषण के अनेक रूप हैं। इनमें से कुछ रासायनिक प्रदूषण इतने विकट हैं कि हम हाथ से छू भी नहीं सकते। उसी तरह रेडियोधर्मी छीजन है जिसको हटाना और ठिकाने लगाना बड़ा टेढ़ा काम है। अब वैज्ञानिकों ने एक ऐसा पदार्थ बना लिया है जो प्रदूषण को चूसकर खींच लेगा और जहाँ हम चाहेंगे, वहाँ उसे छोड़ देगा। बर्मिघम यूनिवर्सिटी के स्कूल ऑफ केलिकल साइंसेज के रसायनवेत्ता डॉक्टर जोसफ रिलजैक जिओलाइट से ऐसा आणविक स्पंज बना रही है जो पानी में से तरह-तरह के रासायनिक पदार्थ चूस लेगा।

पर्यावरण प्रदूषण के कारण पृथ्वी का बहुत बड़ा हिस्सा मरुस्थल में बदलता जा रहा है। विश्व में बढ़ते जा रहे औद्योगिकीकरण तथा तेजी से हो रही वन कटाई के कारण कई हरे-भरे स्थान रेगिस्तान बनते जा रहे हैं। मौसम वैज्ञानिकों का कहना है कि अगर स्थिति यही रही तो सारी पृथ्वी मरुस्थल में बदल जायेगी। इससे बचने केलिए वृषारोपन को बढावा देना है। इसी के मद्देनजर स्पेनी वैज्ञानिक एन्टोनियो इबानेय अल्बा ने एक ऐसा कृत्रिम पेड़ विकसित किया है जिसे उचित संख्या में यदि प्राकृतिक पेड़ों के नजदीक मरुस्थलों में लगाया जाये तो दस वर्षों में सारा मरुस्थल हरा-भरा हो जायेगा।

पडें की कटाई तथा जलवायू में आये परिवर्तन से वर्षा की कमी महसूस की जा रही है। वर्षा की कमी से हमें पेय जल की कमी, सूखा आदि कई मुसीबतों को झेलना पडेगा। इस स्थिति से निपटने केलिए वैज्ञानिकों ने कृत्रिम वर्षा का आविश्कार किया है। इसमें एक रासायन का इस्तेमाल किया जाता है, जिसे वायू में छोडने पर आक्सिजन के साथ मिल जाने से वर्षा होती है। इस तरह मनुष्य अपनी नवीन वैज्ञानिक तथा प्रौद्दोगिकियों के सहारे पर्यावरण के संरक्षण कर रहा है।